श्री महावीर ग्रंथ माला-१२ वां पुष्प

चम्पाशतक

(कवयित्री चम्पा देवी द्वारा निर्मित)

सम्पादक

डा० कस्तूरचंद कासलीवाल

एम ए. पी एच. डी

प्रकाशक

गेंदीलाल साह एडवोकेट

मन्त्री

दि० जैन अ० क्षेत्र श्रीमहावीरजी

महावीर भवन, जयपुर

न

ह

३

४

६

पुस्तक प्राप्ति स्थान :--

(१) साहित्य शोध विभाग
दि. जैन अ. क्षेत्र श्रीमहावीरजी
महावीर भवन, सवाई मानसिंह हाई वे
जयपुर (राज०)

(२) मैनेजर कार्यालय
दि जैन अ क्षेत्र श्रीमहावीरजी
श्री महावीरजी (राजस्थान)

वीर निर्वाण सम्वत् २४९३
वि. स० २०२३
सन् १९६६

प्रथम संस्करण —
५००
मूल्य २)

मुद्रक
एवॉन. प्रिन्टर्स
लालजी साड का रास्ता,
चौकडी मोदीखाना, जयपुर।
दूरभाष ७५५२३ पी पी

विषय-सूची

प्रकाशकीय

हिन्दी भाषा की आदिकालिक कृति 'जिणदत्त चरित' के प्रकाशन के बाद अब यह 'चम्पा शतक' पाठको के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे बडी प्रसन्नता हो रही है। 'चम्पा शतक' एक पद सग्रह है जिसकी रचना दि० जैन समाज की एक प्रमुख महिला कवि 'चम्पादेवी' द्वारा की गई थी। चम्पादेवी देहली की रहनेवाली थी और ६६ वर्ष की अवस्था मे साहित्यिक क्षेत्र मे प्रविष्ट हुई थी। उसका साहित्य निर्माण न कोई ध्येय था और न इस ओर कभी उसकी रुचि ही रही थी किन्तु अपनी रुग्णावस्था मे परमात्मा की भक्ति ही उसे एक मात्र सहारा दिखाई दिया तो वह प्रभ–भक्ति मे लवलीन हो गयी और सर्व प्रथम "पडी मझधार मेरी नैय्या उबारोगे तो क्या होगा" पद के सहारे परमात्मा से प्रार्थना करने लगी। जब उसे रोग-शान्ति लक्षण दिखाई दिये तब अर्हद् भक्ति मे उसकी और भी दृढ आस्था हो गयी और अपने बडे भाई पडित प्यारेलालजी के कहने से वह रचना की ओर प्रवृत्त हुई और मात्र भक्ति के कारण एक के पश्चात् दूसरा पद स्वयमेव निर्मित होता गया।

'चम्पा शतक' हिन्दी पद साहित्य की एक उत्कृष्ट कृति है लेकिन अभी तक यह कृति अपने प्रकाशन से वचित ही थी। यद्यपि आरम्भ मे इसका कुछ अवश्य प्रचार रहा होगा लेकिन प्रकाशन न होने के

कारण इन पदो को भुला दिया गया। इस कारण इस शतक का अपना एक विशिष्ट स्थान है। जब मैंने इन पदो को पढा तो मुझे सीधी सादी भाषा मे लिखे हुए ये पद अच्छे लगे। शतक मे वर्णित पद भाव, भाषा एव चाल (राग–रागिनी) सभी दृष्टियो मे अच्छे हैं। इसके अतिरिक्त ये एक दि० जैन महिला कवि द्वारा निर्मित है। इसलिए इन सभी दृष्टियो से इसका प्रकाशन आवश्यक समझा गया। इससे पूर्व क्षेत्र के साहित्य–शोध विभाग की ओर से 'हिन्दी पद सग्रह' प्रकाशित हुआ था उसका सभो वर्गो ने हार्दिक स्वागत किया और अपनी अमूल्य सम्मति भेजकर हमे प्रोत्साहित किया। बहुत से पाठको नें अवशिष्ट अन्य जैन कवियो के हिन्दी पदो का सग्रह प्रकाशित करने का जो सुझाव दिया है उसी के अनुसार हम यह पद–शतक प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है उक्त पद सग्रह के समान इसके प्रकाशन का भी सर्वत्र स्वागत किया जावेगा।

चम्पा शतक क्षेत्र के साहित्य शोध–विभाग की ओर से प्रकाशित होने वाला १२ वा पुष्प है। इसके पूर्व ११ पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं जिनका परिचय समय समय पर दिया जा चुका है तथा जिनको सूची इसी पुस्तक के अन्त मे प्रकाशित की गयी है। इसके अतिरिक्त 'जैन ग्र थ भण्डार्स इन राजस्थान' (अ ग्रेजी मे) नामक एक शोध प्रबन्ध शीघ्र ही प्रकाशित होकर पाठको के सामने आने वाला है। इस पुस्तक में राजस्थान के १०० से अधिक जैन शास्त्र भण्डारो का सक्षिप्त परिचय उनमे उपलब्ध होने वाले महत्त्वपूर्ण साहित्य का खोजपूर्ण परिचय, भण्डारो की विविध दृष्टियो से महत्ता एव राजस्थानी विद्वानो एव साहित्यकारो का परिचय तथा भण्डारो

मे उपलब्ध अज्ञात ग्रथो का विवरण रहेगा। इस पुस्तक के अतिरिक्त "राजस्थान के कुछ प्रमुख जैन सत–व्यक्तित्व एव कृतित्व" नामक पुस्तक भी प्राय तैयार है और वह भी शीघ्र ही प्रकाशित होकर सम्भवत महावीर जयन्ती तक पाठको के समक्ष आजावेगी।

क्षेत्र कमेटी के सभी सदस्यो को साहित्य प्रकाशन के कार्य मे और भी वृद्धि करने की इच्छा है। इस दिशा मे प्रयत्न चालू है और मुझे पूर्ण विश्वास है कि हम प्रति वर्ष अधिक से अधिक अज्ञात, अप्रकाशित एव महत्वपूर्ण साहित्य का प्रकाशन कर सकेंगे।

दिनाक १०—१०—६६

गैंदीलाल साह एडवोकेट
मन्त्री

भूमिका

'चम्पा शतक' हिन्दी कवयित्री चम्पादेवी के द्वारा रचित १०१ पदो का सग्रह ग्र थ है। १६ वी शताब्दी मे चम्पादेवी सभवत प्रथम स्त्री कवि थी जिसने अपने जीवन के सध्या काल मे साहित्यिक क्षेत्र मे पदार्पण किया किन्तु थोडे ही समय मे उसने हिन्दी जगत् को एक अनुपम कृति भेंट की। मीरा के अतिरिक्त सारे हिन्दी जगत् मे 'चम्पा' के समान सम्भवत कोई दूसरी स्त्री कवि नही मिलेगी जिसने इतने सुन्दर पद बनाये हो। जैसे मीरा ने भगवान् कृष्ण की भक्ति मे तन्मय होकर भक्ति पूर्ण पद लिखे उसी प्रकार चम्पा ने भी अर्हद् भक्ति मे अपने आपको समर्पित कर दिया और फिर उनका गुणानुवाद करके दर्शन प्राप्त किये। प्रभु दर्शन का स्वय चम्पा ने अपनी कृति के अन्त मे जो वर्णन दिया है वह इस प्रकार है —

"मेरी उम्र वर्ष ६६ की है उसमे कर्म वसात मेरे यह रोग उत्पन्न हुआ कि मेरे हाथ तथा पाव चलने से रह गये। भावार्थ-पैर हाथो के जोड सिथल हो गये। इस अवस्था मे मुझे बडी चिन्ता खडी हुई कि हे परमात्मा मेरे आपके दर्शन करने की प्रतिज्ञा है जिसका निर्वाह किस रीति से होगा। दिन ३ तक मैंने रस त्याग किये। जब शरीर मे अत्यन्त असमर्थता हुई तो मैं धरातल मे पडी हुई परमात्मा का स्मरण कर रही थी कि एक पद की मैंने रचना की (जो) आदि मे लिखा है। ' पडी मझधार मेरी नैया ' आदि। जब पदपूर्ण मे मेने

अन्त पद 'मेरी विनती अपावन की विचारोगे तो क्या होगा' कहते साथ मेरे रोमाच होते ही मै फेर चितवन करने लगी कि श्री अरहन्त परमात्मा तुम ही असरन के सरनागत दीनन के दयाल मुझे तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा है वह कब पूर्ण होगी। इतना कहते ही मेरे नेत्र कुछ सकुचित हुये। उस समय एक अद्भुत चरित्र हुआ कि मुझ जिनेन्द्र की पद्मासन स्वेत वर्ण प्रतिमा दृष्टि पडने लगी। कुछ अवस्था स्वप्न कीसो सचेत हो क्या देखती हू कि हाँथ पैरो के जोड खुल गये और कुछ चलने बैठने मे समर्थ हुई। जब मुझे दृढ विश्वास हुआ कि इस रोग से निर्वित्ति का कारण एक जिनेन्द्र भक्ति है। इसमे आश्चर्य ही क्या, पूर्व वादिराज आदि मुनियो के कोढ से रोग शात हुये हैं। इस विचार से मेरे और पद रचना की अभिलाषा हुई कि मेरे बडे भ्राता पडित प्यारेलालजी अलीगढ निवासी मेरी बिमारी की सुनकर मुझे देहली देखने आये। और मैने पूर्व चेष्टा सर्व कह उनसे सम्मती ली कि मेरी अभिलाषा पद रचना की है। आपकी क्या आज्ञा है तब वह कहने लगे अवश्य तुम इस कार्य को करो। इस रचना मे तुम्हारे अत्यन्त शुभ परिनाम रहेगे। इसको सुन मैने पद रचना करि यह शतक पूर्ण किया है। न मैं कुछ पिंगल जानती हू न कुछ शास्त्र ज्ञान ही। केवल जिनेन्द्र की भक्ति इस रचना मे कारण है। इसमे कही न्यूनाधिक छद भग हो तो शुद्ध करि लीजो। अल्प बुद्धि समझ हास्य नही करना। इस शतक मे दो अधिकार है। एक तो जिनेन्द्र की भक्ति दूसरा जिनेन्द्र का उपदेशक भाव। यह दोनो ही का विचार तथा पठन पाठन तै आत्म कल्याण करने का हेतु विचार। सज्जनो! इसके पढने पढाने का अभ्यास सदैव करने योग्य हैं।"

उक्त धारणा के आधार पर यह कहना उचित रहेगा कि चम्पा के हृदय मे अर्हद्भक्ति के प्रति जो अनूठी श्रद्धा थी उस ही के कारण शतक का निर्माण हो सका है। अर्हद् भक्ति ही उसकी प्रेरणा स्रोत थी इसलिए उसने जो कुछ लिखा वह अपनी अन्तरात्मा की प्रेरणा मे ही लिखा। उसकी आखो के सामने प्रभु की साक्षात् मूर्ति विराजती थी और उसी का दर्शन पाकर उसने उनका गुणानुवाद किया। वह भक्ति मे इतनी तन्मय होती कि जो भी उसके मुख से वाक्य निकलता वह पद के रूप मे निकलता इसलिये इन पदो मे उसकी सच्ची अन्तरात्मा की पुकार है, इस तथ्य को कभी मना नही किया जा सकता।

जीवन

चम्पादेवी देहली निवासी लाला सुन्दरलाल जैन टोग्या की धर्म-पत्नी थी। उनके पिता अलीगढ निवासी श्री मोहनलाल पाटनी थे। श्री मोहनलाल के तीन सन्ताने थी—दो पुत्र एव एक पुत्री। दोनो भाई इनसे वडे थे और उनके नाम रामलाल एव प्यारेलाल थे। प्यारेलाल अच्छे विद्वान् थे। ये सरल प्रकृति, धर्म निष्ठ श्रावक एव सफल व्यवसायी थे। रूई एव अनाज के अपने समय के प्रमुख व्यापारी माने जाते थे। चम्पा के जीवन पर सवमे अधिक प्रभाव अपने भाई प्यारेलाल का पडा और वह वचपन से ही स्वाध्याय की ओर रुचि दिखलाने लगी। इसके अतिरिक्त प्यारेलाल से भी अधिक विद्वान् उनके पुत्र थे जिनका नाम प० श्रीलाल था। आपने 'चतुर्विशति जिनपूजापाठ' एव 'भूगोलभ्रमण भ्रान्ति' नामक दो

पुस्तके लिखी। डा० प्रचण्डिया की एक सूचनानुसार इन्होंने मध्यमा के सभी खण्ड उत्तीर्ण किये थे।

चम्पा का जन्म सवत १९१३ के करीब अलीगढ मे हुआ था। छोटी अवस्था मे ही उनका विवाह हो गया और वह दिल्ली सुसराल मे रहने लगी। इनके पति श्री सुन्दरलाल जवाहरात के व्यापारी थे इसलिये धनाभाव का प्रश्न जीवन मे कभी सामने नही आया। पिता एव पति दोनो ही स्थानो पर इनका पूर्ण समादर था। भाई एवं भतीजे के सपर्क से उनमे तत्व-चर्चा की ओर अभिरूचि पैदा हुई और स्वाध्याय मे उनकी प्रवृत्ति बढती गई। लेकिन इन्हे पति का सुख अधिक नही मिला और जब ये ३० वर्ष की थी तभी सुन्दरलालजी का देहान्त हो गया। यह निस्सन्तान थी। एक ओर पति का वियोग तथा दूसरी ओर सन्तान का अभाव–दोनो ही दारुण दु ख उन्हे झेलने पडे। यद्यपि पैसे की कोई कमी नही थी लेकिन फिर भी वियोग तो वियोग ही होता है। विधवावस्था में इन्हे सभवत अलीगढ रहने का अधिक अवसर मिला तथा 'अर्हद्-भक्ति' मे इनकी अधिक रुचि होने लगी। जब यह ६६ वर्ष की थी तब उन्हे रोगो ने आकर पूर्ण रूप से घेर लिया। औषधि लेने पर भी रोग शान्ति का कोई सकेत नही दिखाई दिया। अन्त मे 'अर्हद् भक्ति' ही इन्हे एक मात्र सहारा मिला। वह भगवद् भक्ति मे विभोर हो गयी और पूर्ण तल्लीनता में उनके मुख से "पडी मझधार मेरी नैय्या उबारोगे तो क्या होगा—" ये शब्द निकले। उस समय उसे अपनी सुध–बुध नही रही और वह अपना अस्तित्व खो बैठी।

इस सम्वन्ध मे उसने अपने भाई प्यारेलालजी से भी परामश किया और उन्होने भी इस ओर वढने की प्रेरणा दी। धीरे–धीरे भक्ति की धारा नदी के रूप में परिवर्तित होगयी और एक के पश्चात् दूसरे पद का निर्माण होता गया। कवयित्री की इस 'अर्हद् भक्ति' से उसके सभी रोग शान्त हो गये और वह स्वस्थ हो गयी। 'चम्पा शतक' के निर्माण मे कोई दो वर्ष लगे होगे। सम्भवत यह सवत् १६७० मे समाप्त हुआ होगा। ७० वर्प की अवस्था मे उनका देहान्त हो गया।

चम्पा ने चिरजीलालजी को गोद लिया जिनका स्वर्गवास हुए अभी कोई ५० वर्प करीव हुए होगे। चिरजीलालजी भी नि सतान थ इसलिये उन्हे भी पुत्र गोद लेना पडा। उनके दत्तक पुत्र का नाम चन्दालालजी है जो आजकल जयपुर मे जवाहरात का कार्य करते हैं। चन्दालालजो के ५ पुत्र एव तीन पुत्रिया हैं।

सम्पादन

चम्पा शतक अपने रचनाकाल के पश्चात् लोकप्रिय हो गया, और इसकी अनेक प्रतिया होकर देहली, आगरा, जयपुर, अलीगढ आदि स्थानो के शास्त्र भण्डारो मे सग्रह की गयी। जन-साधारण ने इन पदो को बहुत पसन्द किया। 'चम्पा देवी' ने भक्ति–परक पदो के अतिरिक्त आध्यात्मिक, सामाजिक एव उपदेशी पदो का भी निर्माण किया। अनेक राग एव रागिनियो मे निर्मित इन पदो मे कवयित्री ने जो भाव भरे हैं, उससे उनकी विद्वत्ता, सिद्धान्तभिज्ञता एव आध्यात्मिकता के दर्शन होते हैं।

[नो

'चम्पा शतक' का सम्पादन तीन प्रतियो के आधार पर किया गया है। इन प्रतियो का परिचय निम्न प्रकार है —

'क' प्रति। यह प्रति 'दि० जैन मन्दिर लश्कर, जयपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। इसमे २३ पत्र हैं, जिनका आकार १०"×८" है। इसकी प्रतिलिपि अलवर मे की गई थी। प्रतिलिपिकार थे पं० राम सहाय तथा प्रतिलिपि कराने वाले थे पं० प्यारेलाल अलीगढ वाले। लिपिकाल स० १९७५ मगसिर बुदि ६ है। यह प्रति वैदवाडे की प्रति के आधार पर की गयी थी।

'ख' प्रति। यह प्रति जयपुर के गोधो के दि० जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार की है। इसमे २४ पत्र है तथा यह १२½"× ९" आकार की है। यह प्रति दिल्ली मे वैदवाडा मे लिखी गई थी। लेखनकाल नही दिया हुआ है। प्रतिलिपिकार ने इसमे २५ पदो का एक 'अधिकार' मानकर पूरी रचना को ४ अधिकारो मे विभक्त किया है लेकिन यह सभवत प्रतिलिपिकार की अपनी कल्पना मालूम होती है।

'ग' प्रति। यह प्रति शास्त्र भण्डार दि० जैन मन्दिर सगहीजी, जयपुर की है। इसमे २४ पत्र है और इसका १२ ३"×९" का आकार है। यह प्रति भी वैदवाडे—देहली की प्रति के आधार पर लिखी हुई है।

शतक के पदो को चम्पा ने भक्ति परक एव उपदेश परक इन दो वर्गो मे विभक्त किया है। किन्तु यह एक सामान्य विभाजन है जिसकी सीमा मे प्राय प्रत्येक जैन कवि ने पदो की रचना की है।

महाकवि बनारसीदास, भूधरदास, द्यानतराय जैसे कुछ प्रसिद्ध कवियों ने भक्ति से भी उपदेशी पदो की अधिक रचना की है, जबकि भट्टारक कुमुदचन्द्र, रत्नकीर्ति, शुभचन्द्र जैसे सन्तो ने उपदेशात्मक पदो से अधिक भक्ति परक पदो पर जोर दिया है। चम्पा ने अपने १०१ पदो मे से ४१ पद भक्ति के लिखे है तथा शेष पद अन्य विषयो से सम्बन्धित है। चम्पा सभवतः प्रथम जैन स्त्री कवि है जिसने अर्हद् भक्ति के साथ साथ शास्त्र भक्ति एव गुरु भक्ति परक पद भी अच्छी सख्या मे लिखे है। सामान्य अध्ययन की दृष्टि से हम इन पदो का निम्न प्रकार वर्गीकरण कर सकते है।—

	विषय	पद सख्या	
१.	भक्ति परक		
	(१) अर्हद्भक्ति	२५	४१
	(२) शास्त्रभक्ति	९	
	(३) गुरुभक्ति	७	
२.	अध्यात्म परक	१४	
३.	उपदेश परक (शिक्षात्मक)	४४	
४.	आलोचनात्मक	२	

भक्तिपरक

भक्ति परक पदो की सख्या ४१ है जिसमे देव शास्त्र एवं गुरु इन तीनो की सस्तुति की गयी है। चम्पा ने अर्हद् भगवान को तरन तारन एव जगतपति के नामो से सम्बोधित किया है। परमात्मा की

शान्त मुद्रा के दर्शन मात्र से विपत्तिया स्वत: ही दूर हो जाती है और वह वासना से मन को हटा कर अपने आत्म स्वरूप मे लग जाने की प्रेरणा देती है। यह मनुष्य दीन, गरीब एव अल्प बुद्धि वाला है इसलिए दु खो से घबराकर उनसे छुटकारा पाना चाहता है इसलिए वह चतुर्गति के जाल मे फँसाने वाले इन कर्मो से अलग कराने के लिये भगवान से प्रार्थना करती है। कवयित्री को इन कर्मो से बडी शिकायत है क्योकि कर्मो ने ही उसका दर्शन-ज्ञान लूटा है तथा मोह का प्याला पिला कर उसे पूर्णत अज्ञानी बना दिया है लेकिन परमात्मा की भक्ति मे उसे पूर्ण विश्वास है इसलिए वह कह उठती है कि कर्म उसका क्या करेंगे क्योकि परमेष्ठी उसकी सहायता पर जो हैं।

'करम म्हारो काई करसो जो, म्हारे परमेष्ठी आधार,' और अपनी इस आस्था के लिए वह कितने ही उदाहरण प्रस्तुत करती है जब भगवद् भक्ति के कारण ही भक्त का कुछ भी अनिष्ट नही हो सका था।

'चम्पा' को परमात्म-भक्ति के समान शास्त्र एव गुरु भक्ति में भी अगाध श्रद्धा है। जिनवाणी की शरण से ही मिथ्यात्व का नाश होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। जिनवाणी को हृदय मे उतारे विना स्व एव पर का भेद ही मालूम नही होता इसलिये जीवन मे प्रत्येक मानव को शास्त्र भक्ति मे पूरी श्रद्धा रखनी चाहिये[१]।

---

१. तेरे विन माता स्व—पर विवेक न मैं लहो।
पर को अपनायो, तजि स्वरूप भ्रम मम गहो
यह भूल हमारी तोहि, दीयो छुटकाय कै।
क्या हो पछितायो, काल अनत गमाय कै पद—४०

जो गुरु वीतरागी होता है उसकी भक्ति ही मोक्षमार्ग मे सहायक होती है। गुरु ही उसे उचित मार्ग पर चलने का उपदेश देते है लेकिन ऐसे गुरुओ की चम्पा ने निम्न पहिचान बतलाई है।

करे तप घोर तन बल जोर, जग मे वीर ठारे हैं।
सह दुख जो पडे तन पर, समरसी भाव धारे है॥
नही कुछ दूसरा अनुभव, निजातम प्रीत लागी है।
मिलेगे कब गुरू हमको, जु साचे वीतरागी है॥
जिनो का ध्येय आतम है, लगी है लौ जहा जिनकी।
नही कुछ खबर बाहर की, सुरति जिन मे लगी जिनकी॥
इसी चित ध्यान केवल त, चिदानन्द ज्योति जागी है।
मिलेगे कब गुरु हमको, जु साचे वीतरागी है॥

अध्यात्म परक पदो मे कवयित्री ने अध्यात्म की जो गगा बहायी है उससे पता चलता है कि उसका जीवन कितना विशुद्ध एव चिन्तनशील था। वह अपनी ही आत्मा को सबोधित करती है और उससे जगत के सभी विकल्पो को त्याग कर अपने ही आत्म सुख का वरण करने के लिए कहती है। जब वह परमात्मा एव अपने मे भेद देखती है तो कहती है कि परमात्मा एव ससारी आत्मा एक ही देश के वासी हैं किन्तु दोनो मे इतना ही अन्तर है कि परमात्मा भेद ज्ञान रहित अपने आपको जानता है जबकि उसका आत्मा विवेक को भुला बैठा है। एक आत्मा सिद्धावस्था को प्राप्त हो गयी है जबकि उसकी आत्मा अभी शरीर बन्धन से मुक्त नही हुई है। एक पद मे वह कहती है—जब उसने तत्वो का श्रद्धान नही किया, अपने पराये

गजल, बधाई, कव्वाली, दोहा गजल, निहालदे, मल्हार तमाखू, जमाई की, मारवाडी, मीराबाई, बारह मासा, इन्द्र सभा, धमाल, पूर्वी, मरहठी, होली, नोटकी जैसे तत्कालीन प्रचलित चालो पर पदो की रचना करके उसने पदो को अधिक से अधिक लोक प्रिय बनाने का प्रयास किया है। कवयित्री का उद्देश्य केवल अर्हद् भक्ति था इसलिए वह चाहती थी कि जन साधारण पदो को भगवान् के सामने गाकर अपनी भक्ति प्रदर्शित कर अपना आत्म कल्याण करे ।

आभार

चम्पाशतक के प्रकाशन के लिये प्रबन्ध कारिणी कमेटी के के सभी सदस्यो एव विशेषतः मन्त्री श्री गेंदीलालजी साह एडवोकेट का आभारी हूँ जिनके आग्रह से इसका शीघ्र प्रकाशन हो सका है। मैं डा० महेन्द्रसागरजी प्रचण्डिया अलीगढ एव श्री चन्दालालजी टोग्या, जयपुर (सुपौत्र चम्पादेवीजी) का आभारी हूँ जिन्होने शतक की कवयित्री के सम्बन्ध मे कितने ही तथ्यो की जानकारी देने का कष्ट किया हैं।

इनके अतिरिक्त मैं अपने सहयोगी भा० अनूपचन्दजी न्यायतीर्थ, सुगनचन्दजी जैन एव प्रेमचन्दजी रावका का भी आभारी हूँ जिन्होने इसके सम्पादन एव प्रकाशन मे अपना महत्वपूर्ण सहयोग दिया है।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

——०——

पदानुक्रमणिका

क्र० स०	पद	पद स०

चाल—रेखता

(२)

तुम्हारी शान्ति यह मुद्रा, मेरे मन को लुभाती है।
सकल जञ्जाल को तजकर, निजातम लौ लगाती है ॥ टेक ॥

पदम अरु खडग आसन धर, नजर नासा पै आती है।
परिग्रह बिन नगन मूरत, निराकुल रस चखाती है ॥ तुम्हारी १ ॥

तिहारी वीतरागी छवि, विभावो को हटाती है।
इसी कारण तेरी भक्ति, मुझे निस दिन सुहाती है ॥ तुम्हारी २ ॥

तेरे दर्शन के करने से, विपति सब दूर होती है।
तुरत नस जाय एकीभाव,[1] जोहमसे विजाती[2] है ॥ तुम्हारी ३ ॥

कहू क्या आपकी महिमा, नहीं मति पार पाती है।
कहे कर जोडकर 'चम्पा' शरण गह शिर नवाती है ॥ तुम्हारी ४ ॥

---

१. एकान्त भाव—पदार्थों को एक ही दृष्टि मे देखने की क्रिया।
२. विजातीय—भाव—विपरीत स्वभाव वाले भाव।

★

चाल—रेखता

(४)

बिना जिन आपके स्वामी, नही कोई हमारा है ।
शरण तुम चरण की लीनी यही हमको सहारा है ॥
॥ टेक ॥

लखे तुम को जगत तारन, भवोदधि तरन के कारन ।
लही याते शरन स्वामी तुही सुख देन हारा है ॥
बिना जिन० ॥ १ ॥

तुम ही जग जाल के हरता, तुम ही शिव सुख के करता ।
तुम ही शिव[1]-रमन के भरता, तुम ही निज वोधि धारा है ॥
विना जिन० ॥ २ ॥

तुम्ही ज्ञाता तुम ही भ्राता, तुम ही हो जगत के त्राता ।
कहे 'चम्पा' विपत वन मे, तुम्ही सुख देन हारा है ॥
विना जिन० ॥ ३ ॥

---

१ मोक्ष लक्ष्मी

चम्पाशतक

चाल-रेखता

(१)

पडी मझधार मेरी नैया, उबारोगे तो क्या होगा ।
तरन तारन जगति पति हो, जु तारोगे तो क्या होगा ।। टेक ।।

फसा हू कर्म के फदे, पड़ा भवसिन्धु मे जाके ।
झकोले दुःख के निस दिन, जु काटोगे तो क्या होगा ।। पडी० १ ।।

चतुर गति भमर है जिसमें, भ्रमण की लहिर है तिसमे ।
पडा विधिवश जु मैं उसमे, निकारोगे तो क्या होगा ।। पड़ी० २ ।।

ये भवसागर अथाही है, मेरी है नाव अति झझरी ।
सुनो यह अरज तुम स्वामी, सुधारोगे तो क्या होगा ।। पड़ी० ३ ।।

यहा कोई है नही मेरा, मेरे रक्षपाल तुम ही हो ।
वही जाती मेरी किश्ती, निहारोगे तो क्या होगा ।। पडी० ४ ।।

शरण 'चम्पा' ने लीनी है, भमर में आगई नैया ।
मेरी विनती अपावन की, विचारोगे तो क्या होगा ।। पड़ी० ५ ।।

★

चाल–रामायण

(६)

ऐसी दशा कब होगी हमारी, जैसी दशा प्रभु जो तुम धारी ॥टेक॥

पदमासन वैराग बढावत, नासा दृष्टि महा अविकारी ।
वस्त्रशल्य[1] बिन नगन रूप धार, तज गृह वास भये वनचारी ॥
॥ऐसी दशा०॥१॥

आतम लीन देहसौं विरकत, निरखत शिव तिय वाट तिहारी
राग द्वेष बिन सोहनी सूरत, ध्यान मगन दीखत छविधारी
॥ऐसी दशा०॥२॥

मार वीर मद टार निवारन, क्रोध विकार महा दुखकारी
चिद सरूप दृग ज्ञान चरन के कारन तुम सब जग हितकारी
॥ऐसी दशा ॥३॥

और न चाह जगत की हमको, करदे शिवमग मारगचारी ।
यह जन तुम्हरो निश दिन गावत '[illegible] नई [illegible] गारी
[illegible] ४॥

चाल—बधाई

(८)

शशि वदनी तरुणी रमणी जहा गावत हैं मधुरे स्वररी ।
चलो आज आनन्द वामा घर री । टेक ॥

वामा जननी जगतपति जनमो, आनन्द छायो त्रिभुवनरी ।
वर्ण वर्ण मणि चूर सची तहा पूरत चोक प्रमोद भरीरी ॥
शशिवदनी० ॥ १ ॥

ताडव नृत्य करत सुरपति तहा, तान लेत तन तन तनरी ।
रुणझण रुणझुण नेवर वाजत, घुघरू वजत छम छम छमरी ॥
शशिवदनी० ॥ २ ॥

किन्नर जिन गुन गान करत है, वीन वजे मधुरे स्वर री ।
राजभवन मे दान वढत हैं, जाचक भये वनाकर री ॥
शशिवदनी० ॥ ३ ॥

अश्वसेन के पुत्र भयो है, पारस कहे पूजे सगरी ।
'चम्पा' वलिहारी वा दिन की, प्रगट भयो जग हितकारी ॥
शशिवदनी० ॥ ४ ॥

★

गजल

(१०)

श्री महावीर स्वामी जी, अचल शिवपुर पधारे हैं ।
शुकल धर ध्यान चौथे से, करम रिपु चूर डारे हैं ।
॥ टेक ॥

हुआ निर्वाण कल्याणक, श्री अतिवीर स्वामीका ।
सुरासुर आय कर कीना, महोत्सव वीर स्वामी का ।
भले सन्मति प्रभु मेरे, तुम्हारे नाम सारे हैं ॥
श्री महावीर ०॥ १ ॥

निकट पावापुरी नगरी, तहा से मोक्ष पाई है ।
भली कातिक वदी मावश, करम की जड नसाई है ।
दिवस धन आज का वह है, हुवा आनद हमारे है ॥
श्री महावीर ० ॥ २ ॥

निकस ससार के दुख से न फिर, जग माहि आते हैं ।
प्रभु दृग ज्ञान सुख वीरज, अनतानत पाते है ।
जगत के जाल को तज के, निजातम काज सारे हैं
श्री महावीर०

आपने तो निजानंद ले, वास शिवपुर में जा कीना
ये ही अरमान है स्वामिन, हमें प्रभु सग नहि लीना
कहे कर जोड कर 'चम्पा', शरण अब तुम्हारी निहारे है
महावीर ०

★

चाल–कव्वाली

(१२)

अरज सुनो प्रभु करुणापती, मुझे कर्मों ने आकर घेर लिया।
दर्शन ज्ञान जु लूट लिया, मुझे दीन बना कर जेल किया ॥
॥ टेक ॥

मोह का प्याला पिया जु दिया, मुझे तत्वो का बोध न होने दिया।
आतम शक्ति दवा जु दई, मुझे सशय के जाल मे डाल दिया ॥
॥ अरज सुनो० ॥ १ ॥

मेरे ज्ञान को घात अज्ञान किया मुझे स्वपर विवेक न होने दिया।
मिथ्यात के फदे फास लिया मुझे सम्यक् दर्शन न होने दिया ॥
॥ अरज सुनो० ॥ २ ॥

विधि[1] आठो ने आनि के घेर लिया, मैंने या ही से आनि पुकार किया।
तुमसे तो कहू तो कहू किससे, इन दुष्टो का नाश तुम्हीने किया।
॥ अरज सुनो० ॥३॥

दीन के नाथ दयाल प्रभू मैंने याही मे आपसे अर्ज किया।
मुझे कर्मों की जेल से काढो प्रभु, अब 'चम्पा' ने शरण तुम्हारा लिया ॥
अरज सुनो० ॥ ४ ॥

---

१ कर्म

गजल

(७)

जगतपति अरज यह तुमसे, करम हमको सताते हैं।
करो इनसे जुदा हमको, चतुर्गति मे भ्रमाते हैं॥
॥ टेक ॥

कर्मवश नर्क में जाकर, बहुत से दु:ख पाते हैं।
कोई छेदे कोई भेदे, कोई सूली घराते हैं॥
जगतपति० ॥ १ ॥

पशू गति में जो दुख पाये, न मख से कहे जाते हैं।
कोई मारे कोई ताडे, कोई फांसी झुलाते हैं॥
जगतपति० ॥ २ ॥

बालपन खेल मे खोया, जवानी मारी मन मोहा।
बुढापा देख कर रोया, मनुष भव यो गमाते हैं॥
जगतपति० ॥ ३ ॥

सुरग में देव होवे तव, भोग उपभोग सव भोगे।
मरण लख के विसुरे तव, करम इस विधि नचाते हैं॥
जगतपति० ॥ ४ ॥

भ्रमण से काढ जिन स्वामी, शरण 'चम्पा' ने लीनी है॥
अतुल महिमा तुम्हारी है, गणी[1] नही पार पाते हैं॥
जगतपति० ॥ ५ ॥

---

१ गणी—गणधर

दोहा—गजल

(१४)

अगर परमात्मा के ध्यान, करने की दिलासा है।
तो करलो ध्यान मूरति का, इसी का ये खुलासा है॥
॥ टेक ॥

राग द्वेष विन सोहनो, पदमासन थिररूप।
नासा दृष्टि विचार युत, आतम रूप अनूप॥
अनूपम रूप लख जिसका निजातम होत वासा है॥
॥ अगर० ॥ १ ॥

सव जग की प्रतिमा विकट, ज्ञान ध्यान धन हीन।
परमातम प्रतिमा ये ही, निज सरूप मे लीन॥
कटे हैं पाप दर्शन मे, हृदय आनद भापा है।
॥ अगर ० २ ॥

याते याका ध्येय कर, ध्यान करो गुणवान।
राग द्वेष मिट जाय सब, पावै पद निर्वाण॥
इन्हो के ध्यान करने मे, करम-गण होन नासा है॥
अगर ०॥ ३ ॥

चाल-वधाई

(६)

विघन हरन मरुदेवी के नदन आदीश्वर जिनराई ।
जाके चरण-कमल को निस दिन, सुरपति शीस नवाई ॥
॥ टेक ॥

तिहु जगनायक लायक ज्ञायक, सवही को सुखदाई ।
नाभिराय घर जनम लियो है त्रिभुवन आनन्द छाई ॥
विघन ०॥१॥

सची सहित सुरपति तहाँ आयो, अदभुत शोभ रचाई ।
ताडव नृत्य कियो सुरपति तहा, नख नख सुरी[1] नचाई ॥
॥विघन ०॥ २ ॥

रतनन चोक ज पूरि सची जव, आनन्द उर न समाई ।
किन्नर कर वर वीन वजावत, गावत श्रुत[2] सुखदाई ॥
विघन० ॥ ३ ॥

'चम्पा' धन्य घडी वा दिन की, त्रिभुवनपति उपजाई ।
मिथ्यातम के नाश करन कू, ज्ञान भान दरसाई ॥
विघन० ॥ ४ ॥

---

१. सुरी—देविया २. श्रुत—कान

दोहा—गजल

(१५)

अगर परमात्मा के ध्यान करने की विचारी है।
तो मूरत देख लो जिन की, अनूपम शांतिकारी है॥
॥ टेक ॥

राग द्वेष कामादि विन, भेष जास निर्ग्रंथ।
ता जिन की प्रतिमा विमल, निश दिन ध्यान धरत।
इसी का दर्श है भाई, वडा कल्याणकारी है॥
अगर० ॥ १ ॥

प्रकट शांति छवि विघन हर, मंगल करन अनूप।
सव सुख करन दुख हरन, आतम अनुभव रूप॥
कटैं हैं पाप दर्शन से, विपत सवही निवारी है॥
अगर० ॥ २ ॥

चाल-इन्द्र नारि करि करि सिंगार

(११)

हे दीनबन्धु जगपति उवार, भव सिन्धु माहि से लो निकार।
॥ टेक ॥

यह अगम अथाह पारवार, गति चार भमर जिसके मझार।
अब खेवटिया तुमको निहार, मैं शरन लही अब करो पार॥
॥ हे दीन बन्धु० ॥ १ ॥

तुम ही शरनागति अति उदार, हमरे जिनेन्द्र दुख टारटार।
मोहि देउ विमल कल्याण कार, सुखदायक ज्ञायक भाव सार॥
॥ हे दीनबन्धु ० ॥ २ ॥

तुम हो अनत गुण गण अपार, सब रागद्वेष दीने सुटार।
रिपु आठ करम दीने पछार, यातें शिवरमणी बनी नार॥
॥ हे दीन बन्धु० ॥ ३ ॥

मोहि दीन जान कर दया धार, दुख सागर ते मोहि तार तार।
शिव करो हरो मम विधि दुचार[1] 'चम्पा' यह अरज कहै पुकार॥
॥ हे दीन वन्धु ०॥ ४ ॥

---

१ अष्ट कर्म

चाल—गजल

(१३)

सकल सुख धरन मंगल करन, उत्तम शरण है ये ही।
श्री अरहत आदिक पूज्य पदवी, करन है ये ही ।।
।। टेक ।।

सव साराश जिनमत का, पदारथ एक है ये ही ।।
सुनो विज्ञान अरु वैराग्य मिल, निज भाव है ये ही ।।
।। सकल सुख ० ।। १।।

सजन जो चाहते हो तुम निपट कल्याण आतम का।
विचारो ज्ञान मिल वैराग्य, ये है भाव आतम का ।
।। सकल सुख ० ।। २ ।।

विना इसके कदाचित भी, सफल नाहिं काज आतम का।
सम्हालो हर समय दोनो जु, चाहो राज आतम का ।।
।। सकल सुख ० ।। ३ ।।

विना वैराग्य के कुछ ज्ञान की, शोभा नही पेखी ।
विना कुछ ज्ञान के वैराग्य की, महिमा नही देखो ।।
।। सकल सुख० ।। ४ ।।

इसी से इकट्ठे मिलते जहाँ, वो ही सुमारग है ।
पृथक रहते जहा 'चम्पा' तहा दोनो कुमारग हैं ।।
।। सकल सुख० ।। ५ ।।

चाल–निहालदे

(१६)

अब सुधि लीजे, जननी सरस्वती जी कोई ।
क्यू लगाई माता वार, शिव सुख दीजे आसा लग रही जी ।
अब सुधि ० ॥ टेक ॥

सुखपूरण दुख चूरणे, जी कोई तुम ही को न लखाय ।
धरि विभाव बहु दुख सहैजी, होजी कोई अब तुम शरण लहाय ॥
अब सुधि ० ॥ १ ॥

तुम जाने विन माता जी कोई, स्वपर विवेक न पाय ।
अब शरणो तुमरो लियो जी, हो जो कोई निज निधि देउ वताय ॥
अब सुधि० ॥ १ ॥

तुमरी भक्ति प्रसाद तें जी, कोई वहुत भये भवपार ।
चरण शरण मैंने लियो जो, ए जी कोई अव लो माता उवार ॥
॥ अव

जिनवानी सम जगत में जी, कोई और हि
सव जग स्वारथ सगो जी, कोई विन स्वारथ
अव

'चम्पा' मन वच काय तें ई सेवो
परस्वारथ कै कारणै उ लियो
अव

रागद्वेष अज्ञान ते, चेतन होय अरूज ।
नाश कियो इनको सुजिन, याते जिनवर पूज ॥
जिनो की भक्ति से भविजन, कटै भव वन का वासा है ॥
अगर० ॥ ४ ॥

जो तुम चाहो आतमा, निर्मल होय अनूप ।
तो निश दिन सुमिरन करो जिन प्रतिमा सुख रूप
इसी मे थापना जिनकी कहै 'चम्पा' खुलसा[1] है ॥
अगर० ॥ ५ ॥

★

---

१ निरासा- ख प्रति

गजल

(२१)

दिगम्बर भेष के धारी विरागी गुरु हमारे हैं ।
जिनो ने मोह तज तन का, निजातम काज सारे है ।
॥ टेक ॥

बडा यह कठिन मारग है, चलें जिम खडग धारा पर ।
धरें कोइ वीर जग विरले, तजैं कायर परीस्या[1] डर ॥
सहै दुख जो पडे तन पर, समरसी भाव धारे हैं ॥
दिगम्बर० ॥ १ ॥

विरागी है तो साचे इक, दिगम्बर भेष वारे हैं ।
विषय का लेश नही जिनके, मदन मद चूर डारे है ॥
बडे हैं धीर जग सोई, जिन्होंने व्रत सम्हारे हैं ॥
दिगम्बर० ॥ २ ॥

बडा यह सुगम मारग है, निजातम ध्यान धरने को ।
जहा सुध है नही तन की, जगत की बात करने को ॥
कहे 'चम्पा' जिनो ने काज, आतम के विचारे हैं ॥
दिगम्बर० ॥ ३ ॥

---

१ परीस्या—परीषह-कषायो को जीतना परीषह कहलाती है ।

गजल

(१६)

हुकम जिनवानी का हमको, बजाना ही मुनासिब है।
विसन सातो महा दुख कर, हटाना ही मुनासिब है॥
॥ टेक ॥

जनम मिथ्यात मे इनका, महा परणाम है खोटा।
नही सम्यक्त मे इनका, जताना ही मुनासिब है॥
हुकम० ॥ १ ॥

जहा विसनो का सेवन है, तहा सम्यक्त का कहना।
विषय विष खाय कर जीना, न कहना ही मुनासिब है॥
हुकम० ॥ २ ॥

नाम के जैन भी, सातो विसन से दूर रहते है।
वृथा सम्यक्त धारी के, बताना ही मुनासिब है॥
हुकम० ॥ ३ ॥

अधिकतर पाप प्रकृत्यो का, विसन मे बन्ध होता है।
नही सम्यक्त मे उनका, बताना ही मनासिब है॥
हुकम० ॥ ४ ॥

किसी आशय न समझे से, वचन का हठ नही 'चम्पा'॥
समझ और सोच कर हठ को, हटाना ही मुनासिब है।
हुकम० ॥ ५ ॥

★

गजल

(२३)

वे गुरु विरागी कब मिलेंगे, तरन तारन वीर।
सबोध के मोहि देहि दिक्षा, जो मिटै भव पीर ॥
॥ टेक ॥

ससार विषम अपार बन मे, भटकते बहु काल ।
बीतो अधिक दुख भोगते तहाँ, भारी विपत विशाल ॥
उन दुखन कौ कर चिंतवन मुझे, भिदे मरम सरीर ॥
वे गुरु ० ॥ १ ॥

दुख रूप है नही सुध रही कुछ तन लखो निज सोय ॥
ताही सुतन मे मगन है करि विषय सुख मे मोप ॥
भूलो निजातम ज्ञान धन सुख रूप अचल गहीर ॥
वे गुरु ० ॥ २ ॥

वैराग भावन तप उपावन, तै विरचि अकुलाय ।
ससार ही को बीज बोयो, जमी सो दुखदाय ॥
शिव हेत दर्शन ज्ञान चारित तजो दुख जल तीर ॥
वे गुरु ० ॥ ३ ॥

यो भूल मेरी भई जो कुछ, कहू कहा तक सोय।
ताही मिटावन, हेत सतगुरु, और नाही कोय ॥
'चम्पा' जगत मे प्रिय वचन तें, हरे जग की भीर
वे गुरु ० ॥ ४ ॥

चाल–आई नारि करि सिंगार

(१८)

जिनवानी जग विख्यात सार, कर सुविचार सम्यक्त धार ।
॥ टेक ॥

यह मिथ्यातम को हरनहार, सम्यक् रवि जोति उद्योतकार ।
जिमि वचन किरण फैली विथार, भव जीव कमल बोधन अपार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ १ ॥

वनसघन कुबोध कुठार धार, यह सुमति सुबोध सुधा अपार ।
सब दुरगति दुख सुख देत छार, शुभगति शुचि करत कुमार मार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ २ ॥

चिर पर परणति को देत टार, निज परणति सन्मुख कर विहार ।
मुनिगणधरादि सेवत अपार, जिस गुण गण को नही पारवार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ३ ॥

वच स्यादवाद मुद्रित सुढार, जिन सप्तभगमय किय प्रचार ।
षट द्रव्य पदारथ नव प्रकार, तिन प्रगट किये गति भेदचार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ४ ॥

भव जीवन की प्रतिपालकार, जिन आनन प्रगटी जगमभार ।
'चम्पा' ने शरणो लियो विचार, दुख-जलतें माता दे उतार ॥
॥ जिनवानी ० ॥ ५ ॥

★

चाल—मल्हार

(२५)

चरण शरण मोहि दीजिये अरज यही महाराज
। टेक० ॥

चिन्तामन तुम कलपतरु, कामधेनु सुन नाम ।
आयो तुम पद कलपतरु, कामधेनु सुभ भान ॥
कामधेनु अविचल अमृत धन, काया सर्व सुजान ।
आयो तुम ढिग हे प्रभु, हरो विभाव अकाम ॥
चरण० ॥ १ ॥

धरि विभाव बहु दुख लहे, सब तुम जानत सोय ।
फिर फिर धरत विभाव को, कारज केहि विधि होय ॥
चरण ॥ २ ॥

तेरे सुमरन जापते, दुखद विभाव पलाय ।
तातें तेरी भक्ति ही, सब विधि सरन सहाय ॥
चरण० ॥ ३ ॥

मात तात सुत सजन जन, स्वारथ सगे विचार ।
बिन स्वारथ तुमही सगे, और न कोई निहार ॥
चरण० ॥ ४ ॥

भई चाह निज रूप की, सो दीजे जिनराज ।
'चम्पा' चाह न आन की, कीजे मेरो काज ॥
चरण० ॥ ५ ॥

गजल

(२०)

मिलेंगे कब गुरू हमको, जु साचे वीतरागी हैं ।
जिनो की शान्ति छवि निरखे, विपत सब दूर भागी है ॥
॥ टेक ॥

करें तप घोर तन बल जोर, जग मे वीर ठारे हैं ।
सहें दुख जो पडे तन पर, समरसी भावधारे है ॥
नही कुछ दूसरा अनुभव, निजातम प्रीत लागी है ॥
मिलेंगे० ॥ १ ॥

जिनो का ध्येय आतम है, लगी है लौ जहा जिनकी ।
नही कुछ खबर बाहर की, सुरति निज मे लगी तिनकी ।
इसी चित् ध्यान केवल तें, चिदानद ज्योति जागी है ॥
मिलेंगे० ॥ २ ॥

खडे शत इन्द्र चरणो मे, जिनो की आस करते हैं ।
देउ निज बोध हमको भी, यही अरदास करते हैं ॥
निरख जिस शान्ति मुद्रा को, सहज होते विरागी हैं ॥
मिलेंगे० ॥ ३ ॥

कहै 'चम्पा' जिन्होंने काज आतम के सम्हारे हैं ।
जगेंगे भाग हमरे तब मिले, जब गुरु हमारे हैं ।
दरस कब होयगा जिनका, यही लौ मेरे लागी है
मिलेंगे० ।

चाल—निहालदे

(२६)

प्रभुजी मोहि पार उतारिये जी कोई मैं डूवत भवपार ।
भक्ति भाव धरि भावना कोई भाऊं द्वादश सार ॥
॥ टेक ॥

देह स्वजन और संपदा, थिर नही दीसत कोय ।
थिर प्रभु तेरी भक्ति है, यातें थिर पद होय ॥
प्रभु० ॥ १ ॥

या संसार असार मे, शरण सहाय न कोय ।
एक तिहारी भक्ति ही, शरण सहाई होय ॥
प्रभु० ॥ २ ॥

जगत जाल दुख कर भरी, सुख कौ नही लवलेश ॥
आकुलता विन भक्ति तुम, जो सव हरे कलेश ॥
प्रभु० ॥ ३ ॥

एक अकेलो आतमा, निज सुव वुध सव खोय ।
भ्रमत फिरे तुम भक्ति विन, सग न दूजो कोय ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

निज आतम विन और सव, जिते पदारथ आन ।
तुम शासन जाने विना, लिये जो अपने मान ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

रेख्ता

(२२)

आतम ज्ञेय जान्यो, मुनिवर, आतम ध्येय बनायो।
राग द्वेष सब छांडि ध्यान कर, ताही में लौ लायो॥
॥ टेक॥

तन सम्बन्ध त्याग सब परिग्रह, गिरि वन वास करायो।
भेष दिगम्बर आस न अवर, कठिन पंथ उर लायो॥
मुनिवर आतम०॥ १॥

याही के बल घोर परीषह[1] सहत न रंच डिगायो।
हिम सरवर पावस तरुवर तर ग्रीषम गिर सिर धायो॥
मुनिवर आतम,०॥ २॥

तप के हेत देह कृष कीनो आतम सिद्ध करायो।
ऐसे गुरु के चरण कमल को 'चम्पा' शीस नवायो॥
मुनिवर आतम०॥ ३॥

१ मूलपाठ—परीस्या

ख्याल—मारवाडी

(२६)

नाथ मेरी अर्ज़ी सुन लेना, नाथ मेरी अर्जी सुन लेना।
मैं तुम चरणो की दास, नाथ मोहि शिवरमणी देना।।
।। टेक ।।

तीन लोक तिहु काल मे जी, तुम ही हो सिरमोर।
यातें मैं पायन पडू सु जी, चितवो मेरी ओर।।
नाथ मेरी० ।। १ ।।

भवदधि मे डूवत मुझे सु जी, कही न पायो पार।
तुम ज्ञायक लायक प्रभु जी, अब के लेउ उवार।
नाथ मेरी० ।। २ ।।

भ वर माहि मैं आगयो सु जी, कोई न सुनै पुकार ।।
'चम्पा' तुमपद गह रही सु जी, जल्दी लेउ निकार।
नाथ मेरी० ।। ३ ।।

मैं डूवत अति दीन तुम सुजी दीनन के प्रतिपाल ।
'चम्पा' अर्जी कर रही सु जी, भवदुख तै सु निकाल।।
नाथ मेरी० ।। ४।।

चाल गीता छंदः

(२४)

धन धन्य है मुनिराज ते, गृह छाडि कर वन को गये।
सव ग्रन्थ तजि निरग्रन्थ के, निज भाव मे रमते भये ॥
॥ टेक ॥

गृह जाल अति विकराल विषम अथाह दुख को भर रहे।
इसमे न हित की वात कुछ, छिन २ विपति को सह रहे ॥
धन धन्य है० ॥१॥

ऐसी गृहाश्रम की अवस्था, देखि चित विरकत थये ।
जिय भूल सक्ट मे परे, निज रूप तजि पर वश भये ॥
॥ धन धन्य ॥ २ ॥

इम चिंतवन कर सव तजे पर ध्यान आतम लग रहे।
ऐसे गुरू तारन तरन 'चम्पा', धरत सिर धर नये॥
धन धन्य ॥ ३ ॥

हिंसादि पाप अनेक का गृह काज अघ मे फस रहे ।
ऐसे जन की दशा विकट, निहार निज मे थिर थये ॥
धन धन्य ॥ ४ ॥

चाल–मीराबाई

(३१)

करम म्हारो काई करसी जी, म्हारे परमेष्टी आधार ।
॥ टेक ॥

जनक सुता के धीर्ज कारने अग्नि कुण्ड भयो त्यार ।
सीताजी श्री जिनवर सुमिरे, अग्नि भई जलधार ॥
करम म्हारो० ॥ १ ॥

पवनजय की नारि अजना, घर तैं दई निकालि ।
बनी माहि श्री जिनवर सुमरे, पुत्र भयो वलधार ॥
करम म्हारो० ॥ २ ॥

कलश माहि सासू मिथ्यामत, दीनो साप जु घाल ।
सोमा ने परमेष्टी सुमरे होगई फूल वर माल ॥
करम म्हारो० ॥ ३ ॥

राय दुसासन चीर जू खैचो भरी सभा मे जोय ।
द्रोपद ने प्रभु तुम पद सुमरे, वढो चीर अति सोय ॥
करम म्हारो० ॥ ४॥

जयकुमार गज ग्राह दुष्ट ने पकडो गग मझार ।
तिय सलोचना श्री जिन सुमरे, सती–पति होगये पार ॥
करम म्हारो० ॥ ५ ॥

देह अशुचि शुचि है नही, शुचि है आतम शक्ति ।
ताके अवलम्बन विषै कारण तुमरी भक्ति ॥
प्रभु० ॥ ६ ॥

विधि आवन कौ हेत है, राग द्वेष अरु योग ।
वीतराग छबि देखि तुम, तिनको होत वियोग ॥
॥ प्रभु० ॥ ७ ॥

दुःख हेत आवत रुके शांति भाव जब होय ।
शाति भाव के करन को दरश तुम्हारो जोय ॥
॥ प्रभु० ॥ ८ ॥

चाह दहै तप होत है, तप ते विधि झर जाय ।
वीतराग तुम चाह बिन, निरखत चाह नशाय ॥
॥ प्रभु ॥ ९ ॥

मेरो हितकर लोक मे कोई न दीखे मोय ।
सुख करता तुम ही लखे यातें पूजू सोय ॥
॥ प्रभु० ॥ १० ॥

दुर्लभ या ससार मे, तुमरो शासन ज्ञान ।
भक्ति तिहारी किये विन, केम मिले भगवान ॥
प्रभु० ॥ ११ ॥

धर्म धर्म सब जग कहे, मरम न जा
धर्म एक निज भाव है, तुम दर्शन
प्रभु

भक्ति भाव प्रभु थुति ८ ।
'चम्पा' सफल फलौ वैराग्य
प्रभु०

चाल—बारह मासा

(३२)

सनमति जिन राई, पांवापुर से मोक्ष लहाईया ।
मोह करम को घात, प्रभु जी कर्म घातिया घाते ।
केवल ज्ञान उद्योत भयो जव, वस्तु सवै लखाईया ।।
।। टेक ।।

समोसरन रचना सुर कीनी, शोभा कही न जाय ।
मानस्थभ अशोक वृक्ष जहा, नाटक साल वनाइयां ।।
सनमति० ।। १ ।।

अ तरीक्ष जिनराज विराजै, चौसठ चँवर ढुराईया ।
तीन छत्र त्रिभुवन मन मोहै, भामडल छवि छाइया ।।
।। सनमति० ।। २ ।।

चारतीस अतिशय जुत राजत दोप अठारह नाही ।
अनक्षरी ध्वनि प्रभु की उछरी भविजिय पुण्य वसाईया
सनमति० ।। ३ ।।

गणधर जी ने झेल जु लीनो द्वादशाग में गूथि ।
नय प्रमाण निक्षेप आदिकर मोक्ष मारग दरसाइया ।।
।। सनमति० ।। ४ ।।

जोग निरोध जु कियो प्रभु जी शेष अघातिया घाते ।
एक समय विच मोक्षमहल मे, शिवरमणी को पाइया ।।
।। सनमति० ।। ५ ।।

देह अशुचि शुचि है नही,
ताके अवलम्बन विषै का

विधि आवन कौ हेत है,
वीतराग छबि देखि तुम,

दुःख हेत आवत रुके शांति
शाति भाव के करन को दर

चाह दहै तप होत है, तप ते
वीतराग तुम चाह विन, निरख

मेरो हितकर लोक मे कोई न
सुख करता तुम ही लखे यातें

॥

दुर्लभ या ससार मे, तुमरो श
भक्ति तिहारी किये विन, केम मिले

प्र

धर्म धर्म सब जग कहे, मरम न जा
धर्म एक निज भाव है, तुम दर्शन

प्रभु०

भक्ति भाव प्रभु थुति करी, द्वादश भाव
'चम्पा' सफल फलौ सदा, जौ वैराग्य स

प्रभु०

दोहा

(३३)

चम्पा निज कल्याण की, जिनके वाछा होय ।
जिनवानी के ग्रहण की, करो प्रतिज्ञा सोय ॥
करो प्रतिज्ञा सोय, तुम ब्रह्मा तुम विश्नु सिव,
कोई वुद्ध ईस जगदीस ।
तुम उपदेश दियो विमल, ग्रातम को हित ईस ॥
॥ टेक ॥

होत हितैषी सव जगत, स्वारथ के वश होय ।
विन स्वारथ इस जगत मे, सगो न साथी कोय ॥
तुम ब्रह्मा० । १ ॥

पूज्य जगत मे है वही, जो हित करता होय ।
विन हित करता स्वारथी, ताहि न पूजै कोय ॥
तुम ब्रह्मा ० ॥ २ ॥

विन स्वारथ तुम ही प्रभु, जिय को हित उपदेश ।
दिये ग्रनन्ते काल ज्यो, सुख थिर होय विशेप ॥
तुम ब्रह्मा ० ॥ ३ ॥

तुम उपदेश चितारि कै, सुखी होत यह जीव ।
यह उपकार कियो वडो, यातै पूज्य ग्रतीव
तुम ब्रह्मा ० ॥ `

सव जग देखो टोय के 'चम्पा' जगत
तुम सम ग्रौर न दूसरो, सिव सुख को-
तुम

चाल—निहालदे

(३०)

पूज्य जगत मे तुम धनी जी, तुम सम और न कोय ।
तातै शरना मैं लई जी सरन सहाई होय ॥
पूज्य जगत० ॥ टेक ॥

सकल पदारथ बोध लहै, सकल कियो उपदेश ।
निकल राग अरु द्वेष तै निकल भये परमेश ॥
पूज्न जगत० ॥ १ ॥

विकल भयो अर्जी करू, विकल करो जगदीश ।
विकलपना तुम मे भई, विकल सकल जगदीश ॥
पूज्य जगत० ॥ २ ॥

शाति छवि जिन आपकी, पदमासन सुख रूप ।
आतम मे लौ लग रही, महिमा अधिक अनूप ॥
पूज्य जगत० ॥ ३ ॥

जगत जीव दुख रूप लखि, दियो सु हित उपदेश ।
जगत हितैषी तुम भये, यातै पूज्य विशेष ॥
पूज्य जगत० ॥ ४ ॥

तुम आतम हित करत हौ, काल अनन्तो जोय ।
पूज्य हितैपी हो तुही और न दूजा कोय ।
पूज्य जगत ॥ ५ ॥

'चम्पा' रीति अनादि यह नाहि सिखावै कोय ॥
अपना विरद सम्हालिये तारन तरन ज़ होय ॥
पूज्य जगत० ॥ ६ ॥

चौबोला

(३५)

जिन वचनन की थापना, यह पुस्तक आकार ।
जो जिन की जिन बिंब मे, रंच न भेद लगार ॥
रच न भेद लगार, दुहूं में दोनो ही हितकारी ।
जो माता सरस्वती नही होती अब इसकाल मझारी ॥
जिन प्रतिमा नही प्रगट करे थी शिव मारग सुखकारी ।
पूज्य यातें जग मानी, तरण तारण जिनवानी ॥
जगत मैं सार यही है,
याकी अविनय करे, भूल से ते जन जैन नही है ॥

मैनासुन्दरि राजसुता को, कोढी दीयो व्याय ।
सिद्धचक्र की पूजा कीनी, कचन होगई काय ॥
करम म्हारो० ॥ ६ ॥

सेठानी ने सती चदना, दई जेल मे डाल ।
महावीर के दर्शन कीने, कटी बध ता काल ॥
कर्म म्हारे० ॥ ७ ॥

इत्यादिक जिन सुमरन सेती सकट कटे अपार ।
'चम्पा' कहत बसो उर मेरे, पच परम गुरुसार ॥
कर्म म्हारे० ॥ ८ ॥

चौबोला

(३७)

नित प्रति पूजन कीजिये, महा विनय चितधार ।
विनय सहित लिखवाइये, पढिये विनय विचार ॥
पढिये विनय विचार जासु को विनय धर्म को धारी ।
विनय मूल हैं सब धरमनि को, ये जिनराज उचारी ॥१॥

विनय नसत है षट् धरम गृही के, नास होत अविकारी ।
धर्म नसत अवशेष रह्यो क्या, बुधजन करो विचारी ॥
.. .. अमृत सम ये जान गहीजे ।
जो राखोगे मान तिनो की, सरस्वती वानि भनीजे ॥ २ ॥

卐

ये निर्वाण कल्याण आज दिन, उत्सव उर न समायो ।
इन्द्रादिक सुर असुर जु आये विधि सस्कार कराइया
॥ सनमति० ॥ ६॥

कार्तिक वदि मावस के तडकै, नरनारी मिल आये ।
अष्ट द्रव्य से पूजा कीनी, लाडू दिये चढाइया ॥
सनमति० ॥ ७ ॥

धन्य घडी अर धन्य यह वासर, धन्य साल सुखकारी
जैन धर्म जयवन्त जगत मे, 'चम्पा' निज हितकारी
सनमति जिन ॥ ८ ॥

चौबोला

(३९)

भविक जन तव जिय काज सरेंगे,
विना ग्रहण ससारसमुद्र ते, पार नही उतरेंगे ।
याते मन वच काय लाय, थिर याको नमन करेंगे ॥
तेही लहै मोक्ष का मारग, नहि निगोद विचरेंगे ॥१॥

दौड रैन दिन सेवा कीजे, इसी को कठ धरीजे ।
जे सुनय वचनामृत पीजे ॥
या विन तिरो न कोय जगत मे, शासन साख भनीजे ।
भविक जन ॥२॥

चाल—इन्द्र नारि करि सिगार

(३४)

जबूस्वामी जिनराई मोहि दर्शन द्यो सुखदाई ।
मन वच तन सीस नवाई, पूजो नित प्रति हरखाई ॥
॥ टेक ॥

नगरी राजगृह माही है, अरहदास सुखदाई ।
तिस घर जन्मे तुम आई, तज राज छोड वन जाई ॥
जम्बूस्वामी ० ॥ १ ॥

तुम वारह भावन भाई, लियो महाव्रत सुखदाई ।
तुम घाति घात दुखदाई, प्रभु केवल लक्ष्मी पाई ॥
जम्वूस्वामी ० ॥ २ ॥

भवि जीवन पुन्य वसाई, तुम शिव मारग दरसाई ।
फिर शेष अघाति खपाई, शिव[1] रमणी जाय लहाई ॥
जम्वूस्वामी ० ॥ ३ ॥

मथुरा पच्छिम दिस भाई, निर्वाण क्षेत्र तहा जाई ।
'चम्पा' वदे सिर नाई, तुम चरणो मे लौ लाई ॥
जम्वूस्वामी ० ॥ ४ ॥

---

१ मोक्ष रूपी लक्ष्मी

दर्शन तुमरे तें, निज स्वभाव की सुधि भई।
पर परणति छूटी, वह सरधा उर दृढ भई॥
मेरो मन चचल तोहि छोडि इत उत फिरै।
याही तै माता फिर फिर दुख सागर गिरे॥
जिनवानी०॥ ४॥

तन ही निज मानो, चिद भूलो भ्रम बस पडो।
तै भेद वतायौ, यह उपकार कियो वडो॥
उपकार न भूलो, विनय करू चित लाइ कै।
मैं पूजू ध्याऊँ, सिंहासन पधराइ कै॥
जनवानी०॥ ५॥

गज छाग भुजगी सिंह स्याल कुकर्ट दुखी।
जिन जिन तुम सुमरी, तेई भये अनुपम सुखी॥
तू साची माता दे सव विधि वसु तोडि कै।
'चम्पा' गुण गावै, अरज करै कर जोडि कै॥
जिनवानी०॥ ६॥

*

चौबोला

(३६)

सुर नर पशुपति यति-मरणी याकी सेव करत।
या सम पुज्य न दूसरो याके चाकर सत ॥
याके चाकर सत, सत जिन आगम को समझायौ।
ता आतम को अनुभव कर करम बध छिटकायो ॥
सहस छयानवै चतुर नारि मिल जिनको मन न लुभायो।
नव निधि चौदह रतन छाडि जिन अजर अमर पद पायो ॥
पूज्य यातै जिनवानी, यही सतन-मन मानी ।
इसी का ध्यान धरीजे ॥
छोडि सकल भ्रम जाल, जासु की नित प्रति पूजन कीजे ॥

दूर करन अपराध को, और न समरथ कोय।
वीतराग तुम एक ही, निरपराध कर सोय ॥
मै परणामी० ॥ ७ ॥

हा हा डूबो जात हूँ धरि विभाव दुख रूप ।
मेरे घट निज भाव का, करो प्रकास अनूप ॥
मैं परणामी० ॥ ८ ॥

कहा करू कित जाऊ मै, सब जग देखो टोय ।
जग विभाव मैं फस रह्यो, कारज किहि विधि होय ॥
मैं परणामी० ॥ ९ ॥

पाय पडत हा हा करत, सरनागत प्रतिपाल ।
मुझ विभाव को दूर कर, हे प्रभु दीन दयाल ॥
मै परणामी० ॥ १० ॥

मुझ दुख वाधा करन को, जो विभाव मुझ लार ।
ते सब तुमरी भक्ति तै, मुक्ति होय दुखकार ॥
मैं परणामी० ॥ ११ ॥

देव अनेक निहारियो, सब विभाव युत भ्राति ।
तजि विभाव आतम रचे, तुम विराग छवि शांति ॥
मैं परणामी० ॥ १२ ॥

जो विभाव मे फंसि रहे, रागद्वेष मल लीन ।
निज जन को कैसे करे, निरमल शुद्ध प्रवीन ॥
मैं परणामी० ॥ १३ ॥

यह प्रतीति धरि सब तजे, देव विविध प्रकार ।
वीतराग तुम शरन हो, आयो शांति निहार ॥
मैं परणामी० ॥ १४ ॥

चौबोला

(३८)

जो याकी अविनय क्रिया, करै करावै भूल ।
ते जैनी जैनी नही, जिनमत के प्रतिकूल ॥
जिनमत के प्रतिकूल जिन्हो की, भूल बडी है भारी ।
चार ज्ञानधारी गणधर से, याके पूज्य पुजारी ॥१॥

ता माता की विनय लोपनी, क्रिया करे अघकारी ।
अ त विपाक विसम है याके, करिये काज विचारी ॥
पूज्य की पूजा कीजे, मान तिस को रख लीजे ।
.....कुमति को दूर करीजे ॥

यह जिनमत की चाल सदा की, ताको नाहि तजीजे ॥२॥

मात तात सुत सजन जन, स्वारथ सगे विचार।
विन स्वारथ तुम ही सगे, और न कोई निहार॥
मैं परणामी० ॥ २१॥

भई चाह निज रूप की, सो दीजे महाराज।
और चाह कुछ ना मुझे, कीजे मेरो काज॥
मैं परणामी० ॥ २२॥

चिन्तामणि तुम कलपतरु, कामधेनु सुन नाम।
आयो तुम ढिग हे प्रभु, हरो विभाव अकाम॥
मैं परणामी० ॥ २३॥

आप निकसि जग जाल तै, मुक्त भये निज ठोय।
औरन के दुःख हरन को, तुम ही समरथ सोय॥
मैं परणामी० ॥ २४॥

तुम अनेक उपमा धनी, आतम लीन अखीन।
और जगत वासी जिते, विषयन मै लवलीन॥
मैं परणामी० ॥ २५॥

परम शांति मुद्रा लिये, वीतराग सुखरूप।
निज आतम लौं लग रही, नासा दृष्टि अनूप॥
मैं परणामी० ॥ २६॥

चाल–गीत मारवाडी

(४०)

जिनवानी माता अरजी तो मेरी सुन लीजिये ।
॥ टेक ॥

निपट अयानी चहुगति मे भ्रमतो फिरो ।
तुम पास न आयो, तातें भवसागर परो ॥
मैं चहुगति मे ही, काल अनन्त दुख सहे ।
इक स्वास मझारी, जनम मरन नव दुख लहे ॥
जिनवानी माता० ॥ १ ॥

तेरे विन माता स्व–पर विवेक न मैं लहो ।
पर को अपनायो तजि, स्वरूप गहो ॥
यह भूल हमारी तोहि, दी ... कै ।
क्या हो पछिताये, काल

मुझ भूल
गुरु वहु सम
अव भाग्य
दुठ कर्म

पद

(४२)

प्रभुजी ! तुम आतम ध्येय करो ।
सब जग जाल तने विकलप तजि, निज सुख सहज वरो ।
॥ टेक ॥

हम तुम एक देश के ही वासी, इतनौ ही भेद परौ ।
भेद ज्ञान बिन तुम निज जानो, हम विवेक विसरो ॥
प्रभुजी० ॥ १ ॥

तुम निज राच लगे चेतन मे, देह सनेह टरो ।
हम सम्बन्ध कीयो तन धन से, भव बन विपति भरो ॥
प्रभुजी० ॥ २ ॥

तुमरी आतम सिद्ध भई प्रभु, हम तन बन्ध धरो ।
यातै भई अधोगति म्हारी, भव दुख अगनि जरो ॥
प्रभु० ॥ ३ ॥

देखि तिहारी शाति छवी को, हम यह जान परो ।
हम सेवक तुम स्वामी हमारे, हमहि सचेत करो ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

दर्शन मोह हरी हमरी गति, तुम लख सहज टरो ।
'चम्पा' शर्न लई अब तुमरी भव दुख वेग हरो ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

---

१ मूल प्रति मे धेय पाठ है ।

चाल—इन्द्र सभा

(४१)

मैं परणामी परणमू, धरि विभाव पर जन्म ।
याही तै भव दुख सहू; हेतु न कर्त्ता अन्य ॥
मै परणामी ० ॥ १ ॥

करि विभाव पुदगल विषै, लियो विभाव प्रसग ।
तातै भयो विभाव गुण, सतति रूप अभग ॥
मै परणामी ० ॥ २ ॥

याही तै भव वन भ्रमौ, काल अनतानत ।
यह मेरो अपराव सव, तुम जानत भगवत ॥
मै परणामी ० ॥ ३ ॥

मे करता मै भोगता, मेरे किये विभाव ।
तिस छेदन उपदेश सुन, तुमरो शरन लखाव ॥
मै परणामी ० ॥ ४ ॥

ता विभाव के नास को, तुम कारण जगदीश ।
यातै शरनागति लही, हरि विभाव मुझ ईश ॥
मैं परणामी० ॥ ५ ॥

मे अपरावी अति विकट, फिर फिर करि अपराव ।
पर विभाव मे फस रहो, छांडत नाहि उपाधि ॥
मैं परणामी० ॥ ६ ॥

पद

(४२)

प्रभुजी ! तुम आतम ध्येय करो ।
सब जग जाल तने विकलप तजि, निज सुख सहज वरो ।
॥ टेक ॥

हम तुम एक देश के ही वासी, इतनौ ही भेद परौ ।
भेद ज्ञान विन तुम निज जानो, हम विवेक विसरो ॥
प्रभुजी० ॥ १ ॥

तुम निज राच लगे चेतन मे, देह सनेह टरो ।
हम सम्वन्ध कीयो तन धन से, भव वन विपति भरो ॥
प्रभुजी० ॥ २ ॥

तुमरी आतम सिद्ध भई प्रभु, हम तन वन्ध धरो ।
यातें भई अधोगति म्हारी, भव दु.ख अगनि जरो ॥
प्रभु० ॥ ३ ॥

देखि तिहारी शाति छवी को, हम यह जान परो ।
हम सेवक तुम स्वामी हमारे, हमहि सचेत करो ॥
प्रभु० ॥ ४ ॥

दर्शन मोह हरी हमरी गति, तुम लख सहज टरो ।
'चम्पा' शर्न लई अव तुमरी भव दुख वेग हरो ॥
प्रभु० ॥ ५ ॥

---

१ मूल प्रति मे धेय पाठ है ।

कहा करूँ कहाँ जाऊँ मैं, हे जिनेन्द्र जग ईश ।
मेरे कारज करन कौं, तुम प्रभु विस्वाबीस ॥
मैं परणामी० ॥ १५ ॥

मैं अशक्ति अति दीन मैं, अधम पतित दुख रूप ।
पतित उधारन तुम छते, मैं डूबत भव कूप ।
मैं परणामी० ॥ १६ ॥

मै इकलौ भव बन विषै, कोइ न शरन सहाय ।
शरन सहायी तुम लखै, लीनी शरना आय ॥
मैं परणामी० ॥ १७ ॥

मेरी अर्ज निहारिकै, कीजे मेरो काज ।
जो विभाव तजि शिव लहो, पाऊँ निज पद राज ॥
मै परणामी० ॥ १८ ॥

धरि विभाव बहु दु.ख लहे, सब तुम जानत सोय ।
फिर फिर धरत विभाव को, काज किहि विधि होय ॥
मै परणामी० ॥ १९ ॥

तेरे सुमरण जाप तें, दुखद विभाव पलाइ ।
ताते तेरी भक्ति ही, सब विधि शरन सहाय ॥
मै परणामी० ॥ २० ॥

पद

(४४)

अजी महाराजा दीन दयाल, अरज सुन सरनागत प्रतिपाल ।
॥ टेक ॥

एजी निज कारज साधक लखे सजी, तुम गुण अगम अपार ।
एजी मेरी बाधा हरो प्रभु जी, मैं रही पुकार पुकार ॥
अजी० ॥ १ ॥

एजी कहाँ जाऊ मै, क्या करू सुजी हे जिनेन्द्र जगईश ।
एजी मेरे कारन करन को सुजी, तुम प्रभु विस्वावीस ॥
अजी० ॥ २ ॥

एजी मै अशक्त अति दीनहू सुजी, अधम पतित दुख रूप ।
पतित उधारन तुम छतै सुजी, मै डूबत भव कूप ॥
अजी० ॥ ३ ॥

एजी मै इकिली भववन विषै सुजी,
कोइयन सरन सहाय ।
सरन सहाई तुम लखे सुजी, लीनो सरना आय ॥
अजी० ॥ ४ ॥

एजी 'चम्पा' अरजी कर रही सजी कीजे मेरो काज ।
जो विभाव तजि शिव लहु सुजी, पाऊ निज पद राज ।'
अजी महाराजा० ॥ '

इसी तरह का पद पहिले ४१ संख्या पर आ चुका है तक के अन्तरे प्राय: समान हैं ।

बधाई–पूर्वी

(४६)

प्रभु तुम दीन दयाल वामाजी के लाल सभी के प्रतिपाला जी।
प्रभु जन्मे है पारसनाथ पुरो जी मेरी आस शरण मे आयाजी ॥
॥ टेक ॥

गर्भ माहि जिन आये रतन वरसाये जी।
प्रभु षट् मास मझार आनद–धन छाये जी॥
प्रभु तुम दीन ० ॥ १ ॥

इन्द्र अवधि करि जानी जन्म जिन लीनाजो।
प्रभु जी मेरु सिखर लै जाय न्हवन सुर कीना जी॥
प्रभु तुम दीन० ॥ २ ॥

वारह भावना भाय अथिर जग जान्यो जी।
प्रभु जी त्याग्यौ है राज समाज महाव्रत धार्योजी॥
प्रभु तुम दीन ० ॥ ३ ॥

सुकल ध्यान धरि घाति घातिया सारे जी।
केवल लक्ष्मी पाय भव्यजन तारे जी॥
प्रभु तुम दीन० ॥ ४ ॥

शेप अघातिया घाति वरी है शिव[1] नारि मुक्ति पद लीयो जी।
'चम्पा' की अरदास, पुरी जी मेरी आस, अभय पद दीजो जी॥
प्रभु तुम० ॥ ५

१ मोक्ष रूपी लक्ष्मी

शाति छवी लखि आपकी, शाति रूप हो जाय ।
शाति सुख मई होन को, और न कोटि उपाय ॥
मैं परणामी० ॥ २७ ॥

राग द्वेष मल जीय मे, कहत सयाने लोय ॥
तिस ही मल के हरन को, चाहत हैं सब कोय ॥
मैं परणामी० ॥ २८ ॥

मन हरना छवि आपकी, प्रगट अनूप सरूप ।
जास लखै सब दुख टरैं, राग द्वेष भ्रम कूप ।
मैं परणामी० ॥ २९ ॥

जो जो तुमरी भक्ति में, रचे जीव निज टोय ।
ते अविनाशी थिर भये, सुख अनत अविलोय ॥
मैं परणामी० ॥३० ॥

वार वार विनती करूँ, यदपि दोष पुनरुक्त ।
तदपि तुम्हारी भक्ति विन, और न दीखे कोय ॥
मैं परणामी ॥ ३१ ॥

या ससार असार मे, भक्ति सहाई होय ॥
भक्ति विना 'चम्पा' वन भ्रमे, काढ सके ना कोय ॥
मैं परणामी० ॥ ३२ ॥

गजल

(४८)

जिनो का लक्ष है जिनवर, वही परमात्मा होगे ।
निरतर लौ लगी निज मे, वही धर्मात्मा होगे ॥
॥ टेक ॥

जिनो का लक्ष है पर धन, वे ही तस्कर कहाते हैं ।
वसी चित माहि पर नारी, वही अधर्मात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥ १ ॥

खेलते गजफा शतरज, वे ही ज्वारी कहाते है ।
पराये प्राण हरते हैं, वही पापात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥ २ ॥

नगर की नारि मे चितधर, भखे मद मास जे मूरख ।
लगाया लक्ष उनमे जो, वही नरकात्मा होगें ॥
जिनो का० ॥ ३ ॥

जिनो का ध्येय जैसा है, विसन वैसा ही होता है ।
जिनो का लक्ष है आतम, वही अन्तरात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥ ४ ॥

भविक जन लक्ष आतम का, स्व वस क्यो नही बनाते हो ।
वनाते जो नही 'चम्पा' वही वहिरात्मा होगे ॥
जिनो का० ॥५॥

★

पद

(४३)

प्रभु श्री अरिहत जिनेस मेरे हित के करतारा है।
जग ढूढ फिरा किसहू न दिया, नहिं नेक सहारा है॥
श्री वीतराग सरवज्ञ हितैषी साथ हमारा है, मेरी आखो का तारा है।
॥ टेक० ॥

मैं पड़ा अध भवकूप, रूप अपना न सम्हारा है।
तन ही को अपना मान लियो, दुख द्वद अपारा है॥
प्रभु ०॥ १॥

प्रभु दियौ भेद वतलाय, नही तन जाल तुमारा है।
तुम राग द्वेप वस फसे, चेतना रूप तिहारा है॥
प्रभु ०॥ २॥

अव सव विभाव देउ छोड, तोडि जग मोह पसारा है।
निज ध्येय ध्याय कर सिद्ध होय, तव शिव सुख थारा है॥
प्रभु ॥ ३॥

इम प्रभु किरन उद्योत हो, सव जग उजियारा है।
निज तत्व विवेचन होत नसै, भ्रम पथ अ वियारा है॥
प्रभु ॥ ४॥

ऐसो उपदेश कियो प्रभु ने न कियो परिवारा है।
'चम्पा' हित हेत येही यातें, सिरदेव हमारा है॥
प्रभु० ॥ ५॥

★

चाल-मरहठी

(५०)

श्री जिनमदिर जा करि भविजन आतम हित करना चहिऐ।
जगत के धद को छोड कर, पापो से डरना चहिए ॥
टेक ॥

जिनवर अरचा आगम चर्चा, कठ पाठ करना चहिये।
दुर्लभ समय पाय कर ताहि, ना विसरना चहिये ॥
श्री जिन० ॥ १ ॥

सामायिक गुरु भक्ति श्रेष्ठ आचरण सदा चरना चहिए।
तजि कुसग सुगति माहि, सदा पडना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ २ ॥

कठिन कठिन यह औसर पाया, इससे नही टरना चहिए।
चला जाय जब मिलै ना फेर, यह सुमरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ३ ॥

तन धन सुजन हेत, नही निस दिन महापाप करना चहिए।
इसके कारण समझ क्या, भव भव दुख भरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ४ ॥

रैन दिवस तुम करो कुचर्चा, अब तो यहा डरना चहिए
करो सुचर्चा गहो निज 'चम्पा, पर हरना चहिए ॥
श्री जिन० ॥ ५ ॥

मूल पाठ मे कुचर्चा है।

चाल–धमाल

(४५)

पारसनाथ हरो भव वास, तुव[1] चरणो की शरण गही।
॥ टेक ॥

तीन लोक नायक लायक, सब तारन तरन कही।
भव दुख नासक सुख परकासक ज्ञान विराग मही॥
पारसनाथ० ॥ १ ॥

तुम गुण अगम अपार, नाथ नहिं गणधर पार लही।
भव जिय कमल प्रबोधन कारन, अद्भुत भानु सही॥
पारस० ॥ २ ॥

विन कारन भवजीव उधारण, तुम सम और नहीं।
'चम्पा' तुम यशचद चाँदनी, त्रिभुवन छाय रही॥
पारसनाथ ।

१ "दु चरणो की मै शक्ति गही" ऐसाभी मलप्रति

गजल

(५२)

मनुप भव पाइकै दुर्लभ, वृथा तुम क्यो गमाते हो ।
करो सरधान आतम का, भवोदधि पार जाते हो ।
॥ टेक ॥

वडे सुर असुर पति जग मे, इसी की चाह करते है ।
जन्म नर कव मिले हमको, इसी की आस धरते है ॥
सहज मे आ मिला तुमको, इसे अव क्यो विताते हो ॥
मनुप भव ० ॥ १ ॥

इसी मे सकल सयम है, जिसे धर मोक्ष जाते है ।
इसी मे क्षपक श्रेणी चढ, करम गण को खपाते है ॥
इसी मे सुगति का मारग, इसे तुम क्यो हटाते हो ॥
मनुप भव० ॥ २ ॥

करो अरचा जिनेसुर की, धरो चरचा निजातम की ।
कठिन यह दाव पाया है, करो सरधा जिनागम की ॥
घडी जानी करोडो की, वहाना क्यो बनाते हो ॥
मनुप भव० ॥ ३ ॥

पद

(४७)

महावीर स्वामी, अबकी तो अर्जी सुन लीजिये ।
अतिवीर वीर तुम सनमति दीजिये ॥
॥ टेक ॥

त्रिजग ईस जे सनमुख आये, तेसब एक छिनक मे ढाये ।
एसो वीर काम भट ताकौ तुम सनमुख बल छीजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ १ ॥

परिग्रह छाडि वसे वन माही, निज रुच बाहर की सुधि नाही ।
सिद्ध कीयो आतम बल तप तै, चार करम रिपु खोजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ २ ॥

जव तुम केवल ज्ञान उपायो, देश देश उपदेश सुनायो ।
कियो कल्याण सवही जीवन को, हम हू कू सुख दीजिये ॥
महावीर स्वामी० ॥ ३ ॥

पावापुर तै मोक्ष सिधारे, कार्त्तिक वदि मावस सुखकारे ।
अष्ट कर्म रिपु वश उजारे, काल अनत ते जीजिए ॥
महावीर स्वामी० ॥ ४ ॥

वह दिन आज भयो सुखकारी, आनंद भयो सकल नरनारी ।
[illegible] से करि पूजा थारो, 'चम्पा' निज रस पीजिए ॥

गजल

(५३)

अजव इस काल पचम मे, रुका है मोक्ष मारग क्यो ।
वताना है मेरे भाई, रुका हे मोक्ष मारग क्यो ॥
॥ टेक ॥

ज्ञान सम्यक्त अरु वैराग्य, ये सव मोक्ष मारग है ।
रहे जव इकठे हो कर, तभी ये मोक्ष मारग ह ॥
जिनोने ये नही जाना, पकड एकांत को वैठे ।
किसी ने ज्ञान को धारा, कोई चारित्र मे पैठे ॥
सभी मिल काज करते है, सम्हाला एक मारग यो ॥
अजव० ॥ १ ॥

जिनो के ज्ञान मन भाया, तुरत वैराग्य छुटकाया ।
लखा सव जगत को त्रणवत, वडे पुरुषो को भरमाया ॥
पढे व्याकरण पिगल के, भिपक अरु न्याय कविता भी ।
भय पडित वडे ज्ञानी, न छोडी नेक सठता भी ॥
फसे पडकर कषायो मे ल्यो रुक[1] ज्ञान मारग यो ॥
अजव० ॥ २ ॥

वरे जो सात विसनो को, वडे पडित हुये तो क्या ।
करें जो काम नीचो के, वडे ज्ञानी हुये तो क्या ॥
वही पडित वही ज्ञानी कुविसनो मे वचा हुआ ।

---

१ ल्यो रुक मोक्ष मारग यो ऐसा भी पाठ है

गजल

(४६)

श्री जिनराज की पूजन मुबारिक हो मुबारिक हो ।
जिसे करते है सुरपति मिल, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
॥ टेक ॥

हुवा है जैन पद्धति से, श्री जिन-चक्र का पूजन ।
बहुत आनन्द उर छाया, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ १ ॥

जन्म उत्सव विवाहादिक, जिनो के आदि मे भविजन ।
करे है प्रेम से पूजन, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ २॥

सकल दुख हरन मगल करन, यह शिवराज का पूजन ।
सदा यह भव्य जीवो को, मुवारिक हो मुवारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ३ ॥

वडे अज्ञान से हमने, करी मिथ्यात की वाते ।
तजी है जैन शासन सुन, मुवारिक हो मुवारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ४ ॥

सर्व सज्जन सुजन परिजन, प्रजा और देश के राजन ।
कहे 'चम्पा' इनो को, ये मुवारिक हो मुवारिक हो ॥
श्री जिनराज० ॥ ५ ॥

गजल

(५३)

अजब इस काल पचम मे, रुका है मोक्ष मारग क्यो ।
बताना है मेरे भाई, रुका है मोक्ष मारग क्यो ॥
॥ टेक ॥

ज्ञान सम्यक्त अरु वैराग्य, ये सब मोक्ष मारग है ।
रहे जब इकठे हो कर, तभी ये मोक्ष मारग है ॥
जिनोने ये नही जाना, पकड एकाँत को बैठे ।
किसी ने ज्ञान को धारा, कोई चारित्र मे पैठे ॥
सभी मिल काज करते है, सम्हाला एक मारग यो ॥
अजब० ॥ १ ॥

जिनो के ज्ञान मन भाया, तुरत वैराग्य छुटकाया ।
लखा सब जगत को त्रणवत, बडे पुरुषो को भरमाया ॥
पढे व्याकरण पिंगल के, भिषक अरु न्याय कविता भी ।
भये पडित बडे ज्ञानी, न छोडी नैक सठता भी ॥
फसे पडकर कषायो मे रुल्यो इक[1] ज्ञान मारग यो ॥
अजब० ॥ २ ॥

धरे जो सात विसनो को, बडे पडित हुये तो क्या ।
करे जो काम नीचो के, बडे ज्ञानी हुये तो क्या ॥
वही पडित वही ज्ञानी कुविसनो से बचा हुआ ।

---

१ रुल्यो इक मोक्ष मारग यो ऐसा भी पाठ है

चाल—मरहठी

(५१)

सम्यक् दर्शन सार जानकर, इसे ग्रहण करना चहिये।
मिथ्यादृग अँधकार मानकर, इसको पर हरना चहिये ॥
॥ टेक ॥

सुगुरु सुदेव सुधर्म परख, इनका शरना धरना चहिये।
कुदेव कुगुरु कुपथ ग्रथ लखि, इनसे थर हरना चहिये।
॥ सम्यक्दर्शन० ॥ १ ॥

सप्त विसन का त्याग प्रथम ही, सम्यक् पद धरना चहिए।
इन सेवन तें चतुरगति दुख को, नहीं भ्रमाना चहिए ॥
॥ सम्यक्दर्शन० ॥ २ ॥

षट् अनायतन तीन मूढता, वसु मद मल हरना चहिए।
शकादिक वसु दोष टाल गुण, आठ सदा चरना चहिए ॥
॥ सम्यक् दर्शन० ॥ ३ ॥

सप्त तत्व षट् द्रव्य पदारथ नव अनुभव करना चहिएं।
'चम्पा' तजि विकल्प सब जिय के, दर्शन अनुसरना चहिए ॥
॥ सम्यक् दर्शन० ॥ ४ ॥

*

गजल

(५४)

कहा से आये हो चेतन, कहा को होयगा जाना ।
पथिक जन सोच कर मन में, मुझे यह वात वतलाना ॥
॥ टेक० ॥

मेरा है वास साधारण, जहा नहि स्वास भर जीना ।
दुखो से तडफडाता मै, तहा से निकसि चल दीना ॥
असख्याते नगर घूमा, मगर रचना से पहचाना ॥
॥ कहा से० ॥ १ ॥

कहाँ तक दुख कहू अपना, मैं कर्मोका सताया हूँ ॥
सो तुम ज्ञान मे सारी, जवा से कह न सकता हू ।
कहो स्वामी करू मैं क्या, मुझे कुछ सुहित जितलाना ॥
कहाँ से० ॥ २ ॥

गुरू उपदेश देते है, नगर निज मान पर लीना ।
नगर तुमरा निजातम है, तिसै तुम छोड क्यो दीना ॥
लखो तुम नगर अपने को, करो उस ही मे निज थाना ॥
॥ कहा से० ३ ॥

विना दृग ज्ञान चारित्र के, नही निज थान पाओगे ।
सम्हालोगे नही आये, जहा से आये वाही जाओगे ॥
ये ही उपदेश श्री गुरु का, भला 'चम्पा' के मन माना ॥
॥ कहा से० ॥ ४ ॥

भरोसा स्वास का क्या है, अभी आया नही आया ।
तुझे करना है सो करले, जगत मे थिर नही काया ॥
चला जब जायगा अवसर, भला क्या फेर पाते हो ।
मनुष भव० ॥ ४ ॥

मिला यह काकताली ज्यो न चूको हे मेरे भाई ।
सभलने का समय आया नही कीजे जु सिथलाई ॥
कहे 'चम्पा' अगर चूको तो फिर भव धार जाते हो ॥
मनुप भव ॥ ५ ॥

पद

(५६)

जिय मत खोवे दिन रैन, जैन मत कठिन कठिन पायो
॥ टेक० ॥

काल अनन्त भ्रमण चिर कीना, राग द्वेष वस भये मलीना ।
यही मैल चेतन मे चीना, दूर करन के काज,
जैन मत माहि, भाव पद पद मे दरसायो ॥
जिय मत० ॥ २ ॥

और अनेक विकट मत धारे, रागद्वेष कामादिक वारे ।
तत्व एक द्वय आदि विचारे, तिन चितवत भयो हीन ॥
देह मे लीन, नही कुछ आतम दरसायो ।
जिय मत० ॥ ३ ॥

'चम्पा' भाग उदय अब आयो, ज्ञानी जन ऋषि गण मन भायो ।
जैन रतन चितामणि पायो, धारो जतन विचार ॥
सजन उरसार, कोश धरि मति छुटकायो ।
जिय मत० ॥ ४ ॥

★

भरोसा स्वास का क्या है, अभी आया नही आया।
तुझे करना है सो करले, जगत मे थिर नही काया ॥
चला जब जायगा अवसर, भला क्या फेर पाते हो।
मनुष भव० ॥ ४ ॥

मिला यह काकतालो ज्यो न चूको हे मेरे भाई।
सभलने का समय आया नही कीजे जु सिथलाई ॥
कहे 'चम्पा' अगर चूको तो फिर भव धार जाते हो ॥
मनुप भव ॥ ५ ॥

गजल

(५८)

चेतन सरूप तेरा तू अचेतन होरहा है ।
भ्रम मोह की शराव पी नशे मे सो रहा है ॥
॥ टेक ॥

निजरूप को विसार के पर रूप मे फसा ।
हिसादि पाप कर तू, दुख बीज वो रहा है ॥
चेतन० ॥ १ ॥

सुत मात तात तरुणी, धन धान्य धाम जे है ।
इन के अर्थ अनेक, पाप भार ढो रहा है ॥
चेतन० ॥ २ ॥

सवही सगे गरज के, तेरे न काम आवे ।
अव चेत तू सयाने, कहा वाट जो रहा है ॥
चेतन० ॥ ३ ॥

मानुष जनम को पाके, 'चम्पा' सुधारिये ।
दुर्लभ मिला है वक्त, क्यो अजान खो रहा है ॥
चेतन० ॥ ४ ॥

★

वही उत्तम वही है पूज्य, आतम मे रचा हुआ ।।
विना वैराग्य के धारे, अकेला ज्ञान मारग क्यो ।
अजब० ।। ३ ।।

कोई वैराग्य धारन कर, भये उनमत्त से डोले ।
नमन करते जनन को देखि, मधुरी वान से बोलें ।।
धराये नाम त्यागी, ब्रह्मचारी भी कहाये है ।
कमडल और पीछी धर लगोटी भी लगाये है ।।
नही कुछ ज्ञान सासन का धरा वैराग्य मारग यो ।
अजव० ।। ४ ।।

धरे नही ज्ञान आतम का, बडे त्यागी हुए तो क्या ।
वही त्यागी वही तपसी, अभीक्षण ज्ञान को सारै ।
विना कुछ ज्ञान के धारे, निरा वैराग्य धारण यो ।।
अजव० ।। ५ ।।

सुनो जिम काल मे ज्ञानी पुरुष वैराग्य धारेंगे ।
विरागी भी निरतर ज्ञान व
अवस्था होयगी ऐसी, सुनेगा
बडा दुरभाग्य आया है, पृथक
भला 'चम्पा' पहुप ग ये, विना

पद

(६०)

दिन यो ही बीते जाते है, दिन यो ही बीते जाते है।
जिन के हेतु पाप बहु कीने, ते कुछ काम न आते है॥
॥ टेक ॥

सजन सघाती स्वारथ साथी, तन धन तुरत नसाते है।
दुख आये कोई होय न सीरी, पाप तेरे लिपटाते है॥
दिन यो ही० ॥ १ ॥

कुकथा सुनत प्रेम बहु बाढे, सुकथा सुन मुरझाते है।
सप्त विसन सेवन मे मुखिया, क्यो कर समकित पाते है।
दिन यो ही० ॥ २ ॥

धन को पाय मान के वसि है, मस्तक विकट उचाते है॥
जब जम आय करै घर वासा, तब अति ही पछिताते है॥
दिन यो ही० ॥ ३ ॥

क्रोध मान छल लोभ काम वश, नाना भेष बनाते है।
ऐसे नर भव पाय गमावत, फिर क्या यह विधि पाते है॥
दिन यो ही० ॥ ४ ।

जिनवर अरचा आतम चरचा करत न मन ...
'चम्पा' सोच भजो जिनवर पद, नातर गोते ...
दिन यो ही...

गजल

(५५)

करो निरधार आतम का, जु चाहो काज आतम का।
विना निरधार आतम के, न पाओ राज आतम का॥
॥ टेक॥

लखी यह देह आतम ही, इसी मे सुधि गई थारी।
फसे तन जाल मे निस दिन, गई सब चेतना मारी॥
समय आया है चेतन का, चितारो साज आतम का।
करो निरधार० ॥ १ ॥

विना सुविचार इसके से, अनन्ते काल वीते है।
रचे पर सग मे मूरख, निजातम वोध रीते है॥
अभी चेतो सयाने तुम, धरो सिरताज आतम का।
करो निरधार० ॥ २ ॥

चेतना रूप है तुमरा, न वर्णादिक तुम्हारे हैं।
कर्म का जाल तन अन्तर, न रागद्वेष थारे है॥
सबो से भिन्न लख चम्पा, करो हित काज आतम का।
करो निर० ॥ ३ ॥

चाल—होली

(६२)

चेतन क्यो कुभेप वनावो, ज्ञान विना दुख पावो।
॥ टेक ॥

जो कोई भेप धरो शिव कारण, तो अव ज्ञान वढावो।
छाडि सकल जग धव सयाने, तो ज्ञान कथा चित लावो॥
॥ चेतन० ॥ १ ॥

शासन वाचन प्रछन भावन योही काल गमायो।
जव वैराग सफल हो जावे तो ज्ञान हृदय मे लावो॥
॥ चेतन० ॥ २ ॥

[1]धर वैराग्य नव ग्रीवक लो पहुच वृथा भरमावो॥
.. ..
॥ चेतन० ॥ ३ ॥

ज्ञान समान न आन जगत मे आतम को सुख गावो।
या विन भेष अनेक धरे फिर कुछ भी सार न पावो॥
॥ चेतन० ॥ ४ ॥

कोट वात की बात यही है जो वैराग बढावो।
आतम ज्ञान उपावन विधि कर 'चम्पा' शिव मग ध्यावो॥
॥ चेतन० ॥ ५ ॥

१. ३ रे पद की एक पक्ति नहीं है

पद

(५७)

नहि कियो तत्व सरधान, हटै किम मिथ्यामति भारी ।
॥ टेक ॥

आपा-पर का भेद न जाना, पर परणति ही मे रत माना ।
निज परणति को छोडि, करी तै दुरगति की त्यारी ॥
नहिं कियो० ॥ १ ॥

आस्रव वध किया मन माना, सवर निर्जर भूल अयाना ।
आकुलता विन शिव सुख मे, विपरीति वुद्धि धारी ॥
नहिं कियो० ॥ २ ॥

जैन वर्म का मर्म न जाना, मिथ्यामत मे हुआ दीवाना ।
ताही के मद होय, करी तैं आतम ख्वारी ॥
नहिं कियो० ॥ ३ ॥

देव शास्त्र गुरु पूज न जाना, जिन सिद्धान्त विनय नही ठाना ।
'चम्पा' कर सरवान अरे नादान, मिटै जो[1] भव भ्रमना भारी ॥
नहिं कियो० ॥ ४ ॥

---

१ भव भ्रमण भारी ऐसा भी पाठ है ।

चाल—होली

(६४)

सजन चित चेतो रे भाई ०॥ टेर ॥
अष्टान्हिका पर्व प्रोषध दिन, चतुर्दशी सुगदाई ।
उत्तम पुरुष धर्म साधन कर, नर भव सफल कराई ॥
भूल तुम धूल उडाई ॥ सजन० ॥ १ ॥

अनगाले जल भरि पिचकारी, छोडत मन हरसाई ।
अशुचि महा धरि कीच हाथ मे, पर मुख करत मलाई ॥
कहा सुध बुध विसराई ॥ सजन ० ॥ २ ॥

प्रथम करत उपहार उपानत,[1] फिर मिल हार डराई ।
कालो मुख रासभ[2] असवारी, आगे ढोल बजाई ॥
गाल मुख बकत अथाई ॥ सजन ० ॥ ३ ॥

भग पिये मद भोये चेतन, कहा गई चतुराई ।
तीन भुवन पति सकति होन की, सारी रीत गवाई ॥
सीख कहा सीखे जाई ॥ सजन० ॥ ४ ॥
यातें विरचि धर्म गहि लीजे, सतगुरु सीख सुनाई ।
यह अवसर फिर मिलन कठिन है, कहै 'चम्पा' हित लाई ॥
सजन चित चेतो रे भाई० ॥ ५ ॥

---
१ जूता । २ गधा

*

गजल

(५६)

चिदानद सोच मन माहो, यहा कहो कौन है तेरा ।
वृथा तन जाल मे फसकर, हुआ है मोह का चेरा ॥
॥ टेक ॥

हुआ वस मोह के ऐसा कि, सब सुधि बुधि नसाई है ।
निजातम भूल कर भोदू, लगन तन मे लगाई है ॥
नही है तन जहा तेरा, वृथा तू क्यो कहे मेरा ॥
चिदानद० ॥ १ ॥

सजन धन धान्य पट भूषण, सभी तेरे विजाती है ।
बुरा यह देह मल पुतला, नसत नही वार आती है ॥
समझ अब सुथिर कर मन मे, तुझे अब कौन ने घेरा ॥
चिदानद० ॥ २ ॥

सुता सुत मात पितु भाई, जिनो की आस करता है ।
सगे सब गरज के साथी, कोई नही वीर वरता है ॥
कहे 'चम्पा' निजातम लख, करो फरफद सुरझेरा ॥
चिदानद० ॥ ३ ॥

धमाल

(६६)

दृगधारी की चाल निराली है, निराली है।
मतवाली है ।। टेक ।।

दुख कारण ते डरे निरतर, दुख आये बलशाली है ।
दृगधारी ० ।। १ ।।

सुख चाहे न करे सुख कारण, उपवन मे जिम माली है।
दृगधारी ० ।। २ ।।

जग जन घात करत नही सकित, यह सबजिय प्रतिपाली है।
दृगधारी ० ।। ३ ।।

तन कारज मे सदा उदासी, आतम जोति उजाली है ।
दृगधारी० ।। ४ ।।

'चम्पा' जिय तन मिले नीर पय, याको सुमति मराली है
दृगधारी० ।। ५ ।।

पद

(६१)

यहा कोइ है नही तेरा, फसा क्यो मोह के फन्दे
तुझ कुछ सूझता भी है, दृगन से देख जग खन्दे ॥
॥ टेक ॥

जहा सुत सुता हित भ्राता, पिता नही काम आते हैं।
सभी स्वारथ सगे तेरे, विपति मे भाग जाते है।
अकेला ही तडफता है, पडा जग कूप के बंधे ॥
यहा कोई० ॥ १ ॥

कदा कल्याण तू चाहे तो, फिर इस बात को सुनले।
तेरा तू ही सहाई है, निजातम ध्यान को करले।
करो रुचि ज्ञान अरु थिरता, चिदानद बीच तन मन दे ॥
यहा कोई० ॥ २ ॥

तोड कर मोह दुख दाई, छोड कर वास वन करले।
क्रोध मद मोह माया हास्य, आदिक भाव को हरले ॥
नगन आचार साचा यह, यती का भार धर कन्धे ॥
यहा कोई० ॥ ३ ॥

शुभाशुभ भाव को करके, करम का बंध करता है।
शुद्ध परमातम [illegible] रमले, करम गण झाड झरता है।
[illegible] है रोग सब 'चम्पा' रचो निज छोड सब धंधे
यहा कोई० ॥

चाल—होली

(६३)

चतुर चित चेतो रे भाई, कहा सुध बुध विसराई।
॥ टेक ॥

काल अनत वसो साधारण तहा, कुछ सुध न रहाई।
एक स्वास मे अठदश विरिया, जामण मरण लहाई ॥
निकसि थावर थिति पाई ॥ चतुर० ॥

त्रस पर्याय दुख भोगे सो, जानत जिनराई।
पशु नारक सुर पदवी लह कर, कष्ट अनेक लहाई ॥
कहू समता न गहाई० ॥ चतुर० ॥ २ ॥

दुर्लभ तैं दुर्लभ लहे, जिनमत सुकुल सुभाई।
पाय ताहि निरफल मत खोवो, निज आतम रुचि लाई ॥
ये ही समकित सुखदाई० ॥ चतुर० ॥ ३ ॥

चेतन को कर लक्ष्य सयाने, आन लक्ष्य छुटकाई।
सिद्ध होयगो तब ही आतम [illegible]र दुख [illegible]
॥ चतुर[illegible]

चाल–होली

(६५)

जरा चित चेतो रे भाई, यह चेतन की बार ॥
टेक ॥

मन को ज्ञान भयो नही तुमरे, काल अनत गमायो ।
तहा सीख को काम कहा है, विरथा काल वितायो
कठिन मानुष गति पाई ॥
जरा चित० ॥ १ ॥

सीख जोग वुधि भई हे तिहारी योग मिलो सव आई ।
अव गुरु सीख सुधारस पीजे, नातर दुख चिरथाई ॥
भूल करनी नहिं भाई ॥
जरा चित० ॥ २ ॥

समकित ज्ञान चरन शिव मारग जिनवर ताहि वताई ।
है प्रधान गुण तिन मे समकित आतम रुचि सुखदाई ॥
ताहि 'चम्पा' चित लाई
जरा चित० ॥ ३ ॥

चाल–होली

(६८)

समकित विन गोता खावोगे ।
दर्शन विन गोता खावोगे ॥
॥ टेक ॥

या विन ज्ञान चरण वल शिव नही ।
ग्रैवक लौं चढ जावोगे ॥
समकित विन ० ॥ १ ॥

तन धन कारण लगे रैन दिन ।
तिन मे चैन[1] न पावोगे ॥
समकित० ॥ २ ॥

मिथ्यादृग वस काल अनन्ते ।
भरमे और भिरमावोगे ॥
समकित ० ॥ ३ ॥

नरभव सुकुल धर्म सत सगति ।
मिलो न ऐसो पावोगे ॥
समकित ० ॥ ४ ॥

---

१ 'चेतन' ऐसा भी पाठ है ।

चाल–होली

(६५)

जरा चित चेतो रे भाई, यह चेतन की बार ॥
टेक ॥

मन को ज्ञान भयो नही तुमरे, काल अनत गमायो ।
तहा सीख को काम कहा है, विरथा काल वितायो
कठिन मानुष गति पाई ॥
जरा चित० ॥ १ ॥

सीख जोग वुधि भई हे तिहारी योग मिलो सव आई ।
अव गुरु सीख सुधारस पीजे, नातर दुख चिरथाई ॥
भूल करनी नहिं भाई ॥
जरा चित० ॥ २ ॥

समकित ज्ञान चरन शिव मारग जिनवर ताहि वताई ।
है प्रधान गुण तिन मे समकित आतम रुचि सुखदाई ॥
ताहि 'चम्पा' चित लाई
जरा चित० ॥ ३ ॥

●

चाल–होली

(६८)

समकित विन गोता खावोगे ।
दर्शन विन गोता खावोगे ॥
॥ टेक ॥

या विन ज्ञान चरण वल शिव नही ।
ग्रैवक लौ चढ जावोगे ॥
समकित विन ० ॥ १ ॥

तन धन कारण लगे रैन दिन ।
तिन मे चैन[1] न पावोगे ॥
समकित० ॥ २ ॥

मिथ्यादृग वस काल अनन्ते ।
भरमे और भिरमावोगे ॥
समकित ० ॥ ३ ॥

नरभव सुकुल धर्म सत सगति ।
मिलो न ऐसो पावोगे ॥
समकित ० ॥ ४ ॥

---

१ 'चेतन' ऐसा भी पाठ है ।

चाल–होली

(६७)

मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
॥ टेक ॥

पर परणति तजि, निज परणति गहि ।
ऐजी विसरी निज निधि कब पाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ १ ॥

कब गृह वास उदास होय मैं ।
ऐजी परिग्रह तजि कर वन जाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ २ ॥

कब पदमासन ध्यान करूँ मैं ।
ऐजी का दिन आतम लौ लाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ३ ॥

राग द्वेष तजि इन्द्रीय वश कर ।
ऐजी समरस मे पग जाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ४ ॥

'चम्पा' विधि परिहार करूँ जब ।
ऐजी तब मैं शिव रमणी पाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ५ ॥

चाल—देश

(६६)

चेतो ना सुज्ञानी प्राणी ज्ञान थारा रूप ।
पर सग लाग प्राणी भले सुख रूप ॥
॥ टेक ॥

पूरन गलन यो छै जड को विरूप ।
याके संग राचे प्रानी किये वहु रूप ॥
॥ चेतो० ॥ १ ॥

तन—धन—यौवन ये अथिर कुरूप ।
याके सग राचे प्राणी किय वहु रूप
॥ चेतो० ॥ २ ॥

मात तात सुत मित्र नारी छै अनूप ।
एतो थानें जगत मे नचाये नट रूप
॥ चेतो० ॥ ३ ॥

दर्शन ज्ञान थेतो चेतना सरूप ।
अजर अमर थे छो अचल अरूप
॥ चेतो० ॥ ४ ॥

'चम्पा' तो कहे छै ताको रूप है अनूप ।
क्यो निज निधि देखो थे छो जग भूप
॥ चेतो० ५ ॥

चाल–होली

(६७)

मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
॥ टेक ॥

पर परणति तजि, निज परणति गहि ।
ऐजी विसरी निज निधि कब पाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ १ ॥

कब गृह वास उदास होय मैं ।
ऐजो परिग्रह तजि कर वन जाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ २ ॥

कब पदमासन ध्यान करूँ मैं ।
ऐजो का दिन आतम लौ लाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ३ ॥

राग द्वेष तजि इन्द्रीय वश कर ।
ऐजी समरस में पग जाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ४ ॥

चम्पा विधि परिहार करूँ जब ।
ऐजी तब ही शिव रमणी पाऊँ ॥
मैं कब ० ॥ ५ ॥

चाल—कव्वाली

(७१)

विसन सातो ये दुखदाई, हटाना ही मुनासिब है।
हुकम जिनराज का सब को, बजाना ही मुनासिब है॥
॥ टेक॥

धर्म सम्यक्त दर्शन है, ये ही है मोक्ष की पैडी।
जतन कर कर इसे चित मे, समाना ही मुनासिब है॥
विसन ०॥ १॥

अनते काल से जियने, विसन सातो ही सेये हैं।
विरोधी आत्मा को ये, जताना ही मुनासिब है॥
विसन०॥ २॥

फसे उपयोग इनमे जव, नही सम्यक्त्व रहती है।
कहे 'चम्पा' इनो को अव, मिटाना ही मुनासिव है॥
विसन०॥ ३॥

卐

चाल—होली

(६७)

मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
मैं कब निज आतम को ध्याऊँ ॥
॥ टेक ॥

पर परणति तजि, निज परणति गहि ।
ऐजी विसरी निज निधि कब पाऊँ ॥
मैं कब० ॥ १ ॥

कब गृह वास उदास होय मैं ।
ऐजी परिग्रह तजि कर बन जाऊँ ॥
मैं कब० ॥ २ ॥

[illegible] पदमासन ध्यान करूँ मैं ।
ऐजी [illegible] दिन आतम लौ लाऊँ ॥
मैं कब० ॥ ३ ॥

राग द्वेष तजि इन्द्रीय वश कर ।
ऐजी समरस में पग जाऊँ ॥

पद

(७३)

चलना जरूर होगा, करना है ताहि कर लो।
उठ के प्रभात निस दिन, जिन राज को सुमरलो ।।
।। टेक ।।

सम्यक स्वभाव सुचि जल, भरना है ताहि भरलो।
यह सप्त विसन पावक, जरना है ताहि जरलो
।। चलना० १ ।।

खोटे कुसग सेती, डरना है ताहि डरलो ।
मिथ्या जहर खाकर, मरना है ताहि मरलो
।। चलना० २ ।।

ससार दु ख सागर तिरना, है ताहि तिरलो ।
दृग ज्ञान चरन शिव मग, धरना है ताहि धरलो
चलना० ।। ३ ।।

निज परणति शिव रमणी, वरना हैं ताहि वरलो।
'चम्पा' समय न चूको, जिनवानी को उचरलो
।। चलना० ४ ।।

★

कोटि उपाय बनाय गहो अब ।
नातर बहु पछितावोगे ॥
समकित ० ॥ ५ ॥

तत्व विवेचन जिन वच सरधा
कारण समकित भावोगे ॥
समकित ० ॥ ६ ॥

निश्चय समकित निज आतम रुचि ।
'चम्पा' ताहि बढावोगे ॥
समकित ० ॥ ७ ॥

★

पद

(७५)

आतम अनुभव करना रे भाई।
आतम अनुभव करना रे भाई॥

और जगत की थोती वातें।
तिनके वीच न परना रे॥
आतम०॥ १॥

अनुभव कारन श्री जिनवानी।
नाही के उर धरना रे॥

या विन कोई हितू न जग मे।
इक क्षण नही विसरना रे॥
आतम ०॥ २॥

आतम अनुभव तें शिव सुख हे।
फेर नही यहा, मरना रे॥

पद

(७७)

अमोलक जैन जाति पाई, गहो तुम शिव मग को भाई ॥
॥ टेक ॥

मनुष गति नीठ हाथ आई, करो चित समकित थिरताई ।
ज्ञान चारित से लौ लाई, इसी स भवथित नस जाई ॥
अमोलक० ॥ १ ॥

राज सपति सब थिर नाही, प्रगट ज्यो चपला चपलाई ।
मात पितु सुता सासु साई, सभी ये स्वारथ के भाई ॥
अमोलक० ॥ २ ॥

कायरता दूर करो भाई, धीरता राखो मन माही ।
कहै 'चम्पा' हित लाई, धर्म को मत छोडो भाई ॥
अमोलक० ॥ ३ ॥

चाल—कव्वाली

पद

(७६)

प्यारे शाति दशा को धरो धरो, मेरे भाई ॥
टेक ॥

या बिन भव वन मैं दुख पायो. कवहु न चैन परो।
या ते झरित होत सुख चेतन अनुभव पान करो मेरे प्यारे
॥ शाति दशा ॥ १ ॥

पुत्र पौत्र गज वाज साज सब, धन कन भवन भरो।
विना शाति के शाति कहा है, रचपच क्यो न मरो।
मरो मेरे प्यारे ॥ शाति दशा० ॥ २ ॥

कटिक कोट वल घोटक लोटक कोट की ओट डरो।
सब भ्रम कोटि चोट जमकी ते, कोई नही उवरो ॥
उवरो मेरे प्यारे ॥ शाति दशा० ॥ ३ ॥

कर पर कर पदमासन नैक न, नासा दृष्टि टरो।
अचल अ ग वन वास नगन तन, शात सरूप वरो ॥
वरो मेरे प्यारे ॥ शाति दशा० ॥ ४ ॥

याहि धारि जिन शाति भए लख उन ही का ध्यान धरो।
जिन विन कोउ न तारक 'चम्पा' क्यो भ्रम ताप जरो ॥
जरो मेरे प्यारे० ॥ शाति दशा० ॥ ५ ।

गजल

(७४)

कुसगति सग मे फस कर, जमाना क्यो गमाते हो ।
मनुष भव है बडा दुर्लभ, इसे तुम क्यो विताते हो ॥
टेक ॥

मिला है काकताली ज्यो, इसे क्या फेर पाते हो ।
छोड जिनराज की बानी, वृथा वातें बनाते हो ॥
कुसगति० ॥ १ ॥

लगी नैया किनारे पर, उसे फिर क्यो बहाते हो ।
जरा सोचो मेरे भाई, धरम धारी कहाते हो ॥
कुसगति० ॥ २ ॥

विसन सातो मे फस कर तुम, नही कुछ भी लजाते हो ।
नही है काम ये तुमरा, समझ क्यो नर्क जाते हो ॥
कुसगति ० ॥ ३ ॥

न चरचा जैन आगम की, न उसमे मन लगाते हो
न अरचा कुछ श्रीजिन की, कुदेवो को मनाते हो ।
कुसगति० ॥ ४ ॥

करो जिनराज की पूजा, धर्म को क्यो छिपाते हो ।
कहे 'चम्पा' सुसगति विन, मिनप भव क्यो गवाते हो ।
कुसगति० ॥ ५ ॥

पद

(८१)

नरभव दुर्लभ पाया रे भाई।
नरभव दुर्लभ पाया ॥ टेक ॥

काल अंनत वसो साधारण, निकसत भाग लहाया रे।
इक इन्द्री थावर त्रस [१] लहै है, फिर निगोद तब जाया रे॥
नरभव० ॥ १ ॥

बार बार इम भ्रमण कियो बहु कठिन कठिन यहा आया रे।
फिर यह दाव मिले नही भोदू यह सतगुरु फरमाया रे॥
नरभव० ॥ २ ॥

या नरभव को सुरपति तरसै कब मिल है नर काया रे।
ताकू पाय वृथा तू खोवत विषयन मे बौराया रे॥
नरभव० ॥ ३ ॥

कर विवेक चिद तन दोउन को निज गह तज परछाया।
'चम्पा' यह विधि होय सुखी चिर कर्म कलक नसा
नरभव०

★

१ 'लहै लहै' पाठ भी है

और बात सब बन्ध करत है।
याते बन्ध कतरना रे॥
आतम० ॥ ३ ॥

पर परणति ते पर वस परि हैं।
तातैं फिर दुःख भरना रे ॥
'चम्पा' यातै पर परणति तजि।
निज रस काज सुधरना रे॥
आतम० ॥ ४ ॥

पद

(८३)

सुखिया इक जग समकती, दूजो दीसत नाहिं ।
जिन सरूप अपनो लख्यो लख्यो सुद्धातम ताहि ॥
टेक ॥

निज धन को जु धनी बना, परधन त्याग विरूप ।
ताही के बल होयगा, शिव नगरी को भूप ॥
सुखिया इक० ॥ १ ॥

विषय भोग विष सम लखे, परिग्रह दुख को जाल ।
सुजन लखे स्वारथ सगे, लीनी आतम चाल ॥
सुखिया इक० ॥ २ ॥

तन पर जानो अशुचि गृह, दुख थानक अति निंद ।
चरित मोह वश फसि रह्यौ, जो कादे[1] अरविंद[2] ॥
सुखिया इक० ॥ ३ ॥

सुरनर नाग लख जिते सब विषयन लवलीन ।
यातैं सब दुखिया भये 'चम्पा' समकित हीन ॥

---

१ कीचड़ २ कमल

पद

(७८)

कारण कौन प्रभु मोहि समझायो
॥ टेक ॥

एक मात ने दो सुत जाये, रंग रूप मे भेद न पायो ।
इक चटशाल पढे दोउ मिल, एक भयो जोगी इक विसन लुभायो ॥
कारण कौन० ॥ १ ॥

श्री गुरु कहत वचन सुनि लीजे, दोऊ दशा को भेद कहीजे ।
आतम धेय एक ने कीयो, दूजो तन धन धेय बनायो ॥
कारण कौन० ॥ २ ॥

इक चित चेत वसो निज माही, वाहर तन की कुछ सुध नाही
ध्येय सिद्ध कर भयो निरजन, जन्म मरण दुःख दूर करायो ॥
कारण कौन० ॥ ३ ॥

दूजो तन में आपा जान, निस दिन तामें भयो दिवानो ।
'चम्पा' रागद्वेष वस मूरख, पडि निगोद मे वहु दुःख पायो
कारण कौन० ॥ ४ ॥

*

पद

(८०)

ज्ञान स्वरूपी आतमा याही घट माही ।
जिन जानो तिन सब लख्यो भ्रम भाव मिटाई ।।
टेक ।।

याके ज्ञान विना सव झूठी चतुराई ।
जिन को याका ज्ञान है, तिन निज निधि पाई ।।
ज्ञान स्वरूपी० ।। १ ।।

सरधा याकी कीजिये, तज सब कपटाई ।
निस दिन जिनवानी रटो, जानन के ताई ।।
ज्ञान स्वरूपी० ।। २ ।।

रागद्वेष ज्यो ज्यो मिटै थिरता जब आई ।
यह विधि मारग मोक्ष को गुरु सीख सुनाई ।।
ज्ञान स्वरूपी० ।। ३ ।।

जगत जाल मे क्यो फसे सुन चेतन राई ।
यह निकसन की वार है छोडो सिथलाई ।।
ज्ञान स्वरूपी० ।। ४ ।।

निज कर निज मैं निज लखो, पर तज दुखदाई ।
'चम्पा' सुरलभ काज यह कीजे सुखदाई ।।
ज्ञान स्वरूपी० ।।

चाल—मरहठी

(८६)

तुम सुनियो मेरी बहिन, सीख हितकारी ।
श्री गुरु ने देई बताय, न भूलो प्यारी ॥
॥ टेक ॥

कोई भाग उदै से आय मनुष गति पाई,
जिन धर्म मर्म सत सगति प्रीत सुहाई ।
साधर्मिन से चरचा अरचा जिनराई,
जिन मन्दिर मे यह जोग मिलो सब आई ॥
फिर मिलने को नही दाव चाव न विसारी ।
तुम सुनियो ॥ ० १ ॥

जिन मन्दिर में आकर फिर क्या कीजे,
जिनवानी का कर पाठ कठ कर लीजे ।
ताही का सुमरन कर फिर अर्थ गहीजे,
जब सबद अर्थ गहि लेय भाव चित दीजे ॥
यह कारज दियो बताय परम उपकारी ।
॥ तुम सुनियो ० ॥ २ ॥

पद

(१८२)

चेतन कुमति घर मत जाय, तोकू सुमति रही समझाय।
॥ टेक ॥

रयन दिवस विषयन में खोया, आपा पर का भेद न जोया।
अरे यह विषय जहर मत खाय ॥ चेतन० ॥ १ ॥

हिंसा झूठ चोर धन लायो, पर नारी पर मन भायो।
अरे यह पाप महा दुख दाय ॥ चेतन० ॥ २ ॥

दर्शन ज्ञान स्वभाव न पायो, निज निधि भूल सुपर अपनायो।
अरे ये पर परणति लुभाय ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

कुमति को परिहार जु कीजे 'चम्पा' सीख सुमति की लीजे।
अरे तोय दीनी सीख सुनाय ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

चाल—निहालदे

(८७)

दश लक्षरण यह पर्व है जी,
कोई दशो धर्म सुखकार गहो भव्य हित जानि के जी।
॥ टेक ॥

धर्म धर्म सब जग कहै जी, कोई विरला जाने मर्म।
जो स्वभाव आतम तनो है जी, कोई वही कहो जिन धर्म॥
क्यो न गहै भ्रम छाडि के जी ॥ दश लक्षरण ॥ १।

निज स्वभाव यह धर्म है जी, कोई क्षिमा आदि दस रूप।
जो विभाव इस जीव कै जी, कोई ते अधर्म भव कूप॥
क्यो न तजो गुण आगरे जी ॥ दश लक्षण ॥ ० २ ॥

जो स्वभाव मे रम रहे ते गुनी[1], अरु तजि विभाव दुःखदाय।
वही धर्म धारण करै जी, कोई होय जगत के राय॥
सुख अनन्त विलसे सही जी ॥ दशल लक्षण ० ३ ॥

धर्म वसे निज घट विषै जी, कोई पर मे मिले न सोय।
उर्ध्व मध्य पाताल मे जी कोई सब जग देख्यो ढोय॥
भ्र। वसि जिय भूलो फिरैजी ॥ दश लक्षरण ० ॥ ४ ॥

---

१ मुनी भी पाठ है।

पद

(८४)

चेतन सुनो सुमति मतिवार कुमति से प्रीत लगाने वाले ।
जगत मे निंद कहाने वाले ॥ टेक ॥

कुमता कुमति कुशीली नारि, करती विषयो का परचार ।
इसको वृथा लगाई लार रे, दुरगति के जाने वाले ॥
चेतन० ॥ १ ॥

निज परणति को तजत गवार, पर परणति मे चित को धार ।
ये तो खोटा किया विचार रे, भव वन में भ्रमने वाले ॥
चेतन० ॥ २ ॥

सुमता शील शिरोमरण सार, धरती धर्म ध्यान सुखकार ।
उसको भूला मुगध गवार रे, विषयन के सेवने वाले ॥
चेतन० ॥ ३ ॥

कुमति का करिकै परिहार, सुमति को तुम लेलो लार ।
'चम्पा' निज पर भेद विचार रे, शुभगति के जाने वाले ॥
चेतन० ॥ ४ ॥

★

चाल–जोगी रासा

(८८)

ज्ञान विना वैराग न सोभित, मूरखता दु:खकारी।
विन जानै ते रागद्वेष को, त्याग कियो बुधिधारी ॥
रागद्वेष की रीति यथारथ, ज्ञानवान जिय जाने।
विन जाने ते त्याग गहो, किम मूरखता मन माने ॥
॥ १ ॥

ताते पहिले ज्ञान सभालो, फिर वैराग्य करोजे।
जो पहले वैराग धरी तो, ज्ञान सुधारस पीजे ॥
धरि बैराग ज्ञान नहिं धारे, बाहर भेष दिखावै।
ते परमारथ भूल अनारी, वृथा काल गमावे ॥
॥ २ ॥

मान कषाय जगी उर अतर, ताते भेष बनायो।
धर्मिनि ते नित पूजा चाहै कैसो कपट रचायो ॥
पूजक आवे अति मन भावे, और न ते रिस ठानें।
ऐसे ज्ञान विना सब किरया, मूरख के मन माने ॥
॥ ३ ॥

अपनी पूजा के कारण तुम, जो यह भेष धरो हो।
तो वैराग नाम तज याको, क्यो पाखड करो हो।
पूजा होय न होय फजीता, दिना चार की वारी।
'चम्पा' यह दिन गये सयाने, होगी बहुत खुवारी ॥
॥ ४ ॥

यह चेतन की बार बार उर गुरु कहै,
जिनवानी गृहण करो सुखदाई।।
याके बिन जाने न जीव सुध बुध गहै,
रहो अचेतन होय जगत के माहि ।।
चेतं है० ।। ३ ।।

तातें जिनवानी की सरधा कीजिए,
छोड कोट गृह काज भार दुःखदाई ।
ग्रहण करण के काज प्रतिज्ञा लीजिए,
'चम्पा' यह उपदेश सबनि सुखदाई ।।
चेतं है० ।। ४ ।।

मदिरा मोह पीय के जग जिय, पर परणति चितलाई।
निज स्वरूप को भूल अयाने, सुधबुध सब विसराई।
तू चेते क्यो० ॥ ६ ॥

'चम्पा' कहत तजो विषयनि कौ, सुख चाहो जो भाई।
सेये ते दुरगति पडिजे हो, त्यागे शिव सुख पाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ७ ॥

मन्दिर मे आकर गृह की वात वनावैं,
मिल मिल के वैठे पर निन्दा जु करावैं।
ते कुमता कुटिल कुनारि कुसगति पावैं,
जब सुनै धर्म की वात भाग घर जावैं।
ऐसी नारिन को सग तजो वयवारी
॥ तुम सुनियो ॥ ० ३ ॥

धर्मी जन करते धर्म ध्यान जहां आई,
तिनने यहा आकर घर की कलह मचाई।
यह महा विघन तिन कियो पाप उपलाई,
इसका फल भोगेगी दुरगति के भाई ॥
नहा केवल दु.ख का भोग और नही लारी।
॥ तुम सुनियो ० ॥ ५ ॥

जिनवानी का करि ग्रहण प्रतिज्ञा लीजे,
भर जनम स्वरस को चाख वमन अव कीजे।
तजि विषय कषाय विकार शान्ति रस पीजे,
यह विधि भव दु ख तजि काल अनतो जीजे ॥
'चम्पा' जिनवानी गहो बात सब टारी।
॥ तुम सुनियो ॥ ६ ॥

अबहू तो चेत भले, मेरे चेतन प्यारे ।
नातर भ्रमते काल, अनते माई ॥
॥ विषयनि० ॥ ६ ॥

तै परमोदी जी कि सुन, मेरी सुमता प्यारी ।
जो तू कहे सो करू, तू ही मन भाई ॥
॥ बिषयनि० ॥ ७ ॥

जिनवानी को चित धरो, मेरे कथ पियारे ।
इक छिन विसरो नाहि, गहो चित लाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ८ ॥

जिनवानी जानी नही, मेरी सुमति पयारी ।
यातै विषयनि बीच, रुचो अधिकाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ९ ॥

समकित ज्ञान विराग धरि, मेरे चेतन पयारे ।
याते शिव सुख हौय, रहे थिर थाई ॥
॥ विपयनि० ॥ १० ॥
सुमति नारी की जिन गही, यह सीख पियारी ।
'चम्पा' वह भव पार भये सुखदाई ॥
॥ विपयनि० ॥ ११ ॥

*

उत्तम क्षमा स्वभाव निज अरु मार्दव आरजव धर्म।
सत्य सौच सयम सुतप जी अरु त्याग आकिंचन्य मर्म ।।
ब्रह्मचर्य मिल दश भयेजी ।। दश लक्षण ० ५ ।।

धर्म जगत मे सार है जी, कोई धर्म सदा सुखदाय।
धर्म विना इस जीव को जी, कोई न होय सहाय ।।
'चम्पा' निज घट जोईये जी ।। दश लक्षण ० ।। ६ ।।

पद

(६२)

या ससार असार में, शरना कोई नाही ।
शरण एक निज आतमा, जो रहे निज माही ॥
॥ टेक ॥

और ठौर नही पाइये, निज बीच रहाई ॥

या ससार ० ॥ १ ॥

या तन को अपनो लखो, यह भ्रम दुखदाई ।
तु अन्तर इसके वसे, तोहि सूझत नाही ॥
या ससार ० ॥ २ ॥

निज सरूप को खोजि के, निज मैं लौ लाई ।
याही शिव सुख लहै, यह शरण सहाई ॥
या ससार ० ॥ ३ ॥

यह 'चम्पा' उपदेश के, दाता जिनराई ।
तें शरण व्यवहार सेती, जो न लखाई ॥
या ससार ० ॥ ४ ॥

चाल–मारवाड़ी

(८९)

तू चेते क्यो ना पीछे पछितासी, चेतनराय जी ।
॥ टेक ॥

ज्ञानानद चिद्रूप चिदानद, तै क्या कुमति उठाई ।
इन सग लागि अपनपो भूलो, निज निधि सब विसराई ॥
तू चेते क्यो० ॥ १ ॥

पराधीन छिन माहि छीन है, चपला ज्यो चमकाई ।
ये असार तू सार जानि कै, धर्म ध्यान उर लाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ २ ॥

विस खाये ते इक भव माही, तजे प्राण अकुलाई ।
विषय जहर खाये ते भव भव, मरन लहै दु.खदाई ।
तू चेते क्यो० ॥ ३ ॥

मीन पतग गयद भ्रमर मृग, इन सब विपति लहाई ।
इक इन्द्री सेयें दुःख लहिये, सबकी कौन चलाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ४ ॥

इनके कारण जग मे प्राणी, अपयश लहै अधिकाई ।
रावण कोचक से बौराये, बहुत अवज्ञा पाई ॥
तू चेते क्यो० ॥ ५ ॥

गजल

(६४)

यह ज्ञान रूप तेरा, चेतन विचार करले ।
सब ख्याल छोडि जग के, घट बोध सलिल भरले ॥
॥ टेक ॥

तन मे तेरा वसेरा, सो भी न रूप तेरा ।
धन आदि प्रगट सब पर, इस वात को सुमरले ॥
या ते विभाव ये हैं, दुख बीज इने हरले ॥
यह ज्ञान ० ॥ २ ॥

सूक्ष्म शरीर अन्तर है, कारमान दुखकर ।
इस फद मे पडा तू, जिस फद को कतर ल ॥
यह ज्ञान ॥ ० ३ ॥

जिन को कहे तुमारा, यह मोह का पसारा ।
इनसे विरक्त 'चम्पा', मध्यस्थ भाव धरले ॥
यह ज्ञान ० ॥ ४ ॥

चाल—मारवाडी

(९०)

विषयनि को संग छोड दे रे, मेरे चेतन प्यारे।
कहत सुहित उपदेश, सुमति घर आई ॥
॥ टेक ॥

विषयनि को सग ना छूटे री, सुमता नारी।
जाय छूटेंगे री, मरन जब आई ॥
॥ विषयनि० ॥ १ ॥

मरण समय यदि कुछ छूट गये, सुन चेतन प्यारे।
तदपि न छूटे कुफल, महा दुखदाई ॥
॥ विषयनि० ॥ २ ॥

कहा करु पर वस भयो, मेरी सुमता प्यारी।
भूल भई अति मोर, कुमति मन भाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ३ ॥

बीती ताहि विसार दे, मेरे चेतन प्यारे।
आगे की सुध लेय, सहज बन आई ॥
॥ विषयनि० ॥ ४ ॥

सीख तिहारी ना सुनी, सुन सुमता प्यारी।
तातें बहु दुःख सहे, न समता पाई ॥
॥ विषयनि० ॥ ५ ॥

वहा जाय करि गिरनार पर, परदक्षिणा देती भई ॥
असरन सरन मेरे प्रभु, मैंने शरन तेरी[1] गही ।
राजुल ० ॥ ५ ॥

तज के सकल श्रृंगार राजुल, स्वेत साडी तिन गही ।
भाई जु बारह भावना, भव भोग ते विरकत ठही ॥
राजुल ० ॥ ६ ॥

लागी आतम से लगन, अरु देह से ममता नही ।
वह मोक्ष मारग मे लगी, निज भाव मे थिरता गही ॥
राजुल ॥ ७ ॥

सन्यास धारण कर के राजुल, सोलवे स्वर्गे गई ।
'चम्पा' कहे धन धन उसे, तिय लिंग को छेदत भई ॥
राजुल ० ॥ ८ ॥

---

१ 'तुमरी' ऐसा पाठ भी है ।

चाल–मारवाडी

(९१)

सुमति समझावे जी, कुमति के लारे चेतन मत लाग।
म्हाने आवे अचम्भो जी ॥ टेर ॥

इसके सगमत राचो चेतन, नरक माहि ले जावे।
छेदन भेदन ताडन मारन, सूली माहि धरावे जी ॥
सुमति० ॥ १ ॥

पशुगति मे लेजा कर चेतन, बहुते दुःख दिखावे।
भूख प्यास परवस मे रहकर, कष्ट अनेक लहावे जी ॥
सुमति० ॥ २ ॥

मानुष गति मे जाकर चेतन, कभी न समता पावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट सयोग मे, यो ही काल गमायोजी ॥
सुमति० ॥ ३ ॥

पर सपति लखि झूरे चेतन, सुरग माहि तन पावे।
आर्ति रौद्र कुध्यान धारि, मरि इक इन्द्री हो जावे।
सुमति० ॥ ४ ॥

कुमती का परिहार जु कीजे, या सग बहु दुःख थाई।
'चम्पा' सीख सुमति की लीजे, यह तुमको सुखदाई।
सुमति० ॥ ५ ॥

साला' भी पाठ है।

वहा जाय करि गिरनार पर, परदक्षिणा देती भई ॥
असरन सरन मेरे प्रभु, मैंने शरन तेरी[1] गही ।
राजुल ० ॥ ५ ॥

तज के सकल शृंगार राजुल, स्वेत साडी तिन गही ।
भाई जु बारह भावना, भव भोग ते विरकत ठही ॥
राजुल ० ॥ ६ ॥

लागी आतम से लगन, अरु देह से ममता नही ।
वह मोक्ष मारग मे लगी, निज भाव मे थिरता गही ॥
राजुल ॥ ७ ॥

सन्यास धारण कर के राजुल, सोलवे स्वर्ग गई ।
'चम्पा' कहे धन धन उसे, तिय लिग को छेदत भई ॥
राजुल ० ॥ ८ ॥

---

१ 'तुमरी' ऐसा पाठ भी है ।

दोहा

(६३)

ज्ञान तरोवर अति सघन, शोभनीक तव होय ।
जव लागैं वैराग फल, नातर गहै न कोय ॥ १॥

ज्ञान विना वैराग्य के, सफल न होय विराट ।
फल विन वृक्ष विलोकि के, पक्षी लागे वाट ॥२॥

या ते ज्ञानी जनन को, यही भला उपदेश ।
कोट उपाय विचार के, करें विराग विशेष ॥३॥

वडी कठिनता सो मिले, ज्ञान कला जग माहि ।
जानें सो प्राप्ति करैं, मूरख जाने नाहि ॥ ४ ॥

सुत जनने के कष्ट को, पूतवती जो नारि ।
जानें वह, जानें नही, वध्या नारि कुनारि ॥ ५ ॥

ज्ञान कला जिनके जगी, नही भयो वैराग्य ।
विषय कषायो मे फसे, प्रगट्यौ वडो अभाग्य ॥ ६ ॥

'चम्पा' तज अज्ञान को, गहो ज्ञान सुखकार ।
भवदधि से तारक यही, ज्ञान सहित वैराग्य ॥७॥

चाल—नौटंकी

(६८)

कौन गुनाह है जी, नाथ मेरो कौन गुनाह है जी ।
एजो हमको तजि शिव, रमणि धरी चित ॥
कौन गुनाह है जी ॥ टेक ॥

राजुल कहै कर जोरि नाथ, अरजी चित धारो जी ।
मैं लिया चरण शरण नाथ, भव वन से काढो जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ १ ॥

तीन प्रदक्षिणा देय, सीस चरणो मे दीना जी ।
प्रभु असरण सरण सहाय नाथ, मैं शरणा लीना जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ २ ॥

कितने ही भव को प्रीति, नाथ अव क्यो विसराई ।
एजी राखो चरण मझार, शरण मैं तुमरी आई ॥
कौन गुनाह ० ॥ ३ ॥

मे भ्रम भूल वसाय सहे, भव भव दुख भारी जी ।
व तुम चरण परसाद, कटैं अघ सव दुखकारी जी ॥
कौन गुनाह ० ॥ ४ ॥

गजल

(६५)

जे जिनवानी को वेचि उदर भरते हैं।
कुल लाज छोड कर अधम काज करते हैं।।
।। टेक ।।

जो मोक्ष महल की ऊंची नौसरनी थी।
संसार समुद्र के तारन को तिरणी थी।।
जिन वचन तनी आज्ञा सिर पर धरनी थी।
तजि विनय धर्म को लोभ अग्नि जरते हैं।।
जे जिनवानी० ।। १ ।।

आज्ञा वह क्या है जिनवर की सुन लीजे।
सरवारथसिद्धी टीका देख गहीजे।
शासन विक्रिया करि धन का लाभ करीजे।।
ज्ञानावरणी का आस्रव हेतु भनीजे।।
लोभी ह्वै जिन वचन लघन अनुसरते हैं।।
जे जिनवानी० ।। २ ।।

गजल

(६६)

सभा यह जैन शासन की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
॥ टेक ॥

पडे जो मोह निद्रा मे, उन्हे चलकर जगाती है।
भला उपदेश दे दे कर, प्रतिज्ञा को कराती है॥
हितैषी जैनवानी की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ १ ॥

निपट कल्याण का मारग, उसे हर दम बताती है।
कुसगति कामना खोटी, तिसे हट कर हटाती है॥
परम कल्याण करनी यह, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ २ ॥

विना जिन वचन के धारे, अपने को जैन गिनते हैं।
नही कुछ द्रव्य है घर मे, वृथा धनवान वनते है॥
ऐसे जीवो को समझाते मुवारिक हो मुवारिक हो।
सभा० ॥ ३ ॥

प्रतिज्ञा वारि जिनवानी, जिन्होने कठ कीनी है।
जगत मे धन्य ते प्राणी, विपति जिन टारि दीनी है॥

पद

(९७)

तू ज्ञानी है चिद्रूपमई, क्यो देह अशुचि मे[1] मे प्रीति लई[2] ।
ये पूरन गलन स्वभाव धरे, थिरता न रहै तू मान कही ॥
॥ टेक ॥

मूत्र पुरीष भडार भरी, यह चाम की चादर ओट दई ।
घिन देह अपावन जान यही, यामे नही सार विचार सही ॥
॥ तू ज्ञानी ० ॥ १ ॥

सात कुधात की पोट मई, मुनिराज ने ममता त्याग दई ।
निज आतम शक्ति विचार सही, याते शिव नारि को जाय लई ॥
तू ज्ञानी ० ॥ २ ॥

ये पोखत पोखत जात सही,सग नाहि चलै एक पैड कही ॥
'चम्पा' तजिये दुःख दया मई, ये शुभ गति रोकन हार सही ।
तू ज्ञानी ० ॥ ३ ॥ २४ ॥

---

१ 'से' भी पाठ है । २ 'ठई' पाठ भी है ।

★

गजल

(६६)

सभा यह जैन शासन की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
॥ टेक ॥

पडे जो मोह निद्रा मे, उन्हे चलकर जगाती है।
भला उपदेश दे दे कर, प्रतिज्ञा को कराती है॥
हितैषी जैनवानी की, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ १ ॥

निपट कल्याण का मारग, उसे हर दम बताती है।
कुसगति कामना खोटी, तिसे हट कर हटाती है॥
परम कल्याण करनी यह, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ २ ॥

विना जिन वचन के धारे, अपने को जैन गिनते है।
नही कुछ द्रव्य है घर मे, वृथा धनवान बनते है॥
ऐसे जीवो को समझाते मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ३ ॥

प्रतिज्ञा धारि जिनवानी, जिन्होने कठ कीनी है।
जगत मे धन्य ते प्राणी, विपति जिन टारि दीनी है॥

पद

(६७)

तू ज्ञानी है चिद्रूपमई, क्यों देह [illegible] ।
ये पूरन गलन स्वभाव धरे, थिरता न [illegible] ।।
[illegible]

मूत्र पुरीष भंडार भरी, यह चाम [illegible] ।
घिन देह अपावन जान यही, यामें नहीं [illegible] ।।
।। तू ज्ञानी० ।। १ ।।

सात कुधात की पोट मई, मुनिराज ने ममता त्याग दई ।
निज आतम शक्ति विचार मही, यातें शिव नारि [illegible] ।।
तू ज्ञानी ० ।। २ ।।

ये पोखत पोखत जात सही, संग नाहिं चलै [illegible] ।।
'चम्पा' तजिये दुःख दया मई, ये शुभ गति [illegible] ।
तू ज्ञानी ० ।। ३ ।। ५४ ।।

---

१ 'से' भी पाठ है । २ 'ठई' पाठ भी है ।

★

पद

(१००)

भवि जन नमो अरहत आदिक, उनका सरणा लीजिए।
इससे विघन सब दूर होवै, ये ही मगल कीजिए॥
॥ टेक॥

हे दयानिधे हम सबो पर, यह अनुग्रह कीजिए।
जो इहा बैठे भविक जन, सब पै कृपा कीजिए॥
भविजन० ॥ १ ॥

मोक्ष मारग पथ हम शुचि, जान के भर दीजिए।
फिर ना कभी नीचै गिरै, जिन धर्मार्थी कीजिए॥
भविजन० ॥ २ ॥

इस सभा को अब इहा, तुमरा शरण सुख बीज है।
मोक्ष फल दातार हो, हमको अमर कर दीजए॥
भविजन० ॥ ३ ॥

जिनराज की लीनी शरन, अरजी मेरी सुन लीजिए।
भव भव मे अपने चरण का, 'चम्पा' को शरण दीजिए॥
भविजन० ॥ ४ ॥

प्रतिज्ञाकार ऐसे जन, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ४ ॥

गहो जिनराज की वानी, यही अपनी कमाई है।
सुमन 'चम्पा' भला उपदेश सुन[1] माला बनाई है॥
पहनना है मेरे भाई, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ५ ॥

---

१ 'गुन' ऐसा भी पाठ है

मगल	मगल	१०	!
घद	घद	२	५
नहौ	नही	८	६
पडित	पडित	१६	६
तुभ	तुभे	२	७
चिदानद	चिदानन्द	१०	७
स	से	४	७
सत	सतसग	५	१८
कोचक	कीचक	१६	१८
पयारी	पियारी	१०	१०
सगमत	सग मत	३	१०
विक्रिया	विक्रीयाँ	११	११
कुसगति	कुसगति	८	१२

———

प्रतिज्ञाकार ऐसे जन, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ४ ॥

गहो जिनराज की वानी, यही अपनी कमाई है।
सुमन 'चम्पा' भला उपदेश सुन[1] माला बनाई है॥
पहनलो हे मेरे भाई, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभा० ॥ ५ ॥

---

१ 'गुरु' ऐसा भी पाठ है

पद

(१०१)

दिगबर भाव लिंग धारी, सदा साचे अविकारी ॥ टेक ॥

काम मे जब तिय को जोवै ।
उदय जब काम भाव होवै ॥
काम की परीक्षा प्रगट भाई ।
होत है नगन भेष माही ॥
[illegible] वस्त्र मे अग को, जाच न होत अनग ।
तिन अनग किम साध, परीक्षा भाव लिंग के सग ॥
प्रगट सव जानत नर नारो ॥ दिगम्बर० ॥ १ ॥

दिगम्बर भेष कठिन वाना ।
ताहि तजि कीना मन माना ॥
वसन को परिग्रह नहि जाना ।
धर्म उपकरन वस्त्र ठाना ॥
[illegible] लिंग उपयोग परिग्रह, ताहि करै मुख खोल ।
[illegible] को सन्मान करावत, तावुन कै मुख पोल ॥
[illegible] विपरीत चली भारी ॥ दिगम्बर० ॥ २ ॥
[illegible] सम्यक मोक्ष मार्ग सारांस ।
[illegible] जिनमत को यो सिद्धान्त ॥

हमारे प्रकाशन

१. राजस्थान के जैन शास्त्र भडारो की ग्रन्थ सूची : प्रथम भाग
पृष्ठ सख्या २५८ मूल्य ५ रु०

२. राजस्थान के जैन शास्त्र भडारो की ग्रन्थ सूची : द्वितीय भाग
पृष्ठ स० ४५० मूल्य ८ रु०

३. राजस्थान के जैन शास्त्र भडारो की ग्रन्थ सूची · तृतीय भाग
पृष्ठ स० ४१२ मूल्य ७ रु०

४. प्रशस्ति संग्रह— पृष्ठ स० ३३५ मूल्य ७ रु०

५. तामिल भाषा का जैन साहित्य मूल्य .२५ पैसे

६. सर्वार्थसिद्धिसार मूल्य ४ रु०

७ **Jainism a Key to True Happiness.** मूल्य १ रु०

८ प्रद्युम्न चरित पृष्ठ स० ३६० मूल्य ४ रु०

९. राजस्थान के जैन शास्त्र भडारो की ग्रन्थ सूची चतुर्थ भाग
पृष्ठ स० १००० मूल्य १५ रु०

१०. हिन्दी पद सग्रह पृष्ठ स० ५०० मूल्य ३ रु०

११ जिरणदत्त चरित पृष्ठ स० ३०० मूल्य ५ रु०

१२. चम्पाशतक पृष्ठ स० १५६ मूल्य २ रु०

एर्वांन प्रिन्टर्स, लालजी साड का रास्ता, जयपुर।

शुद्धाशुद्धि पत्र

शुद्ध	पंक्ति	पृष्ठ
दृष्टि	३	६
मूलपाठ-शल्ल	१५	६
मुख	७	७
रुग भुग	७	८
ससार	१२	१०
वोध	४	१२
तुम से न कहूँ	११	१२
नहिं	१०	१३
खुलासा	७	१५
लियो	१६	१६
मोय	६	२४
भक्ति	२	२८
नमझायो	३	४०
कुर्कट	११	४५
शतरज	७	५१